धर्मायण

विषय-सूची

पटना का वर्णन : रॉल्फ फिच की लेखनी से –भवनाथ झा 2

कुनालोपाख्यानम्
अनु.– डा. (प्रो.) ब्रह्मचारी सुरेन्द्र कुमार 10

रामायणकालीन अयोध्या नगरी –डॉ.मोना बाला 19

पंचमुखी भगवान सदाशिव –श्री युगल किशोर प्रसाद 24

गंगा-शान्तनु का मिलन और ''भीष्म'' की उत्पत्ति
–डॉ. जयनन्दन पाण्डेय 28

कलियुग का काल –डॉ. उषा रानी 32

अब लौं नसानी अब ना नसैहौं –पं. सुरेशचन्द्र मिश्र 34

ईश्वरानुभूति –पं.सुरेशचन्द्र मिश्र 38

वास्तु-विज्ञान-विमर्श –डॉ. राजनाथ झा 41

योगिराज श्री श्यामाचरण लाहिड़ी –डॉ. उमाशंकर सिंह 45

अष्टावक्रगीता (द्वितीय प्रकरण) अनु.– डा. उमाशंकर सिंह 53

जल ही जीवन है –डॉ. ओम प्रकाश सिंह 56

प्राग्वचन –डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव 64

पत्रिका में प्रकाशित विचार लेखक के हैं। इनसे सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं है। हम प्रबुद्ध रचनाकारों की अप्रकाशित, मौलिक एवं शोधपरक रचनाओं का स्वागत करते हैं। रचनाकारों से निवेदन है कि सन्दर्भ-संकेत अवश्य दें।

धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना की पत्रिका

अंक : 91

जनवरी-जून, 2018

माघ-आषाढ़, 2073-74

प्रधान सम्पादक

भवनाथ झा

अतिथि सम्पादक

श्री मगनदेव नारायण सिंह

महावीर मन्दिर प्रकाशन
के लिए
प्रो. काशीनाथ मिश्र
द्वारा प्रकाशित
तथा
प्रकाश ऑफसेट, पटना में मुद्रित
अक्षर संयोजक **दिनकर कुमार**

पत्र-सम्पर्क:

धर्मायण,
पाणिनि-परिसर,
बुद्ध-मार्ग,
पटना-800001
दूरभाष – 0612-3223293
E-mail: mahavirmandir@gmail.com
Web: www.mahavirmandirpatna.org

मूल्य : **पन्द्रह रुपये**

पटना का वर्णन : रॉल्फ फिच की लेखनी से

-भवनाथ झा

गंगा के किनारे अवस्थित पाटलिपुत्र को कम से कम एक सहस्राब्दी तक सम्पूर्ण भारत की राजधानी रहने का गौरव प्राप्त हुआ है। उसके बाद भी गंगा के किनारे अवस्थित होने के कारण इसका व्यापारिक, एवं राजनैतिक महत्त्व कभी कम नहीं हुआ। फलतः १६वीं शती से जब आधुनिक विदेशी यात्री भारत-भ्रमण में आये तो अधिकांश यात्रियों ने पटना का भ्रमण कर इस नगर वृत्तान्त प्रस्तुत किया। इस शृंखला के अन्तर्गत इस अंक में राल्फ फिच का यात्रा-वृत्तान्त प्रस्तुत है। इसका वृत्तान्त हमें तीन स्रोतों से उपलब्ध हुआ है। यद्यपि इनमें से प्राचीनतम स्रोत में मथुरा एवं प्रयाग से सम्बन्धित वृत्तान्त को भी पटना के साथ जोड़ दिया गया है। यहाँ तीनों स्रोतों से प्राप्त विवरणों का तुलनात्मक अध्ययन कर वस्तुस्थिति का निर्धारण किया गया है।

रॉल्फ फिच नामक यात्री ने भारत-भ्रमण के दौरान आगरा से बंगाल के सतगाँव जाने के क्रम में पटना शहर का भ्रमण किया था। फिच का जन्म 1550 ई. में हुआ था। भारत का भ्रमण करनेवाला यह पहला इंग्लैंड का पर्यटक एवं व्यापारी था। इसने अकबर के काल में 1581 से 1591 तक भारत का भ्रमण किया। इस क्रम में भारत में यह गोवा होते हुए आगरा पहुँचा। आगरा के बाद इलाहाबाद, बनारस, पटना होते हुए गंगा नदी के मार्ग से कूचबिहार, चित्तगोंग होते हुए समुद्री मार्ग से पेगू और वर्मा गया।

अपनी इस यात्रा में इसने पटना का वृत्तान्त लिखा है। यह वृत्तान्त सर्वप्रथम 1614 ई. में प्रकाशित पुस्तक Purchas his pilgrimage: or Relations of the world and the religions observed in all ages and places discovered, from the creation unto this present के प्रथम भाग में पृष्ठ संख्या 475 पर प्रकाशित हुआ।

रॉल्फ फिच के भारत-यात्रा-वृत्तान्त का सचित्र डच संस्करण *Aanmerklyke reys van Ralph Fitch, koopman te Londen, gedaan van anno 1583 tot 1591 : na Ormus, Goa, Cambaya, Bacola, Chonderi, Pegu, Jamahay in Siam, en weer na Pegu: van daar na Malacca, Ceylon, Cochin, en de geheele kust van Oost&Indien* का प्रकाशन 1706 ई. में हुआ।

इसके बाद फिच का यात्रा-वृत्तान्त सबसे प्रामाणिक रूप में प्रकाशित करने का श्रेय John Horton Relay को मिला, जिसने Ralph Fitch, England's Pioneer to India and Bourma, His companions and contemporaries] with his remarkable narrative told in his own words में रिचार्ड हेक्लूइट (1553-1616 ई.) द्वारा स्थापित संस्था में उपलब्ध मूल प्रतियों के आधार पर इसे 1899 ई. में प्रकाशित किया।

इसके बाद विलियम फोस्टर ने Early Travels in India, 1583-1619 नामक पुस्तक में भी आर.फिच के यात्रा-वृत्तान्त को 1921 ई. में प्रकाशित किया।

यहाँ इन तीनों स्रोतों से पटना का वृत्तान्त प्रस्तुत है। जॉन हॉर्टन रिले ने इस प्रकार उद्धृत किया है।

[1]"बनारस से मैं गंगा के रास्ते नीचे की ओर पटना गया, जिस रास्ते में मैंने अनेक सुन्दर शहरों को और एक फलों-फूलों से भरे देश को पार किया और अनेक बड़ी नदियाँ गंगा में मिलती हैं, इनमें से कुछ तो गंगा-जैसी ही बड़ी हैं, जिनके कारण गंगा की चौड़ाई बढ़ जाती हैं, और इतनी बढ़ जाती है कि बरसात के समय आप एक किनारे से दूसरे किनारे को देख नहीं सकते।

जब भारतीयों के अधजले लाश को नदी में बहा दिया जाता है तो पुरुष जल में इस तरह बहते कि उनका मुँह नीचे की ओर रहता जबकि औरतों का मुँह उपर की ओर रहता- मैंने सोचा कि ये ऐसा करने के लिए कुछ बाँध देते हैं, पर उन्होंने कहा कि नहीं। इस देश में बहुत चोर हैं, जो अरबियों की तरह मालूम पड़ते हैं, क्योंकि उनका कोई निश्चित घर नहीं है और कभी किसी स्थान पर रहते हैं तो कभी किसी स्थान पर।

यहाँ की महिलाएँ चाँदी और ताँबा से इतनी सजी-धजी हैं कि देखने में विचित्र लगती है और पैरों के अंगूठों में इस तरह अंगूठी पहनती हैं जिस कारण वे जूती नहीं पहन सकती।

यहाँ पटना में ये सोने इस प्रकार प्राप्त करते हैं। वे धरती में गहरे गड्ढे खोदते हैं और बडी-बडी हाँड़ियों में उस मिट्टी को साफ करते हैं और उसमें सोना पाते हैं और गड्ढा के चारों ओर ईंट लगा देते हैं ताकि मिट्टी न गिरे।

पटना एक विशाल और महान् नगर है। भूतकाल में वह एक साम्राज्य था, लेकिन अब यह महान् मुगल जलालुद्दीन अकबर के शासन में है। यहाँ के लोग लम्बे और छड़हरे हैं और इनके बीच कई पुरानी लोककथाएँ हैं। इनके घर सामान्य हैं जो मिट्टी के बने हैं तथा खर-पतवार से छाये हुए हैं और रास्ते चौड़े हैं। इस शहर में कपास, कपास के कपड़े, बहुत मात्रा में चीनी का व्यापार होता है, जिन्हें वे यहाँ से बंगाल और भारत में दूसरी जगहों तक ले जाते हैं। यहाँ बहुत अधिक मात्रा में अफीम और अन्य उत्पाद भी हैं। यहाँ राजा के अधीन तिप्परदास नामका प्रमुख व्यक्ति है लोगों के बीच बहुत महत्त्व है।

यहाँ मैंने एक अजीब धार्मिक व्यक्ति देखा जो बाजार में घोड़ा पर बैठा हुआ था लेकिन लगता था जैसे वह सो रहा हो, अनेक लोग उसके पास आते थे और हाथों से उसके पैर छूते थे और तब उसके हाथ को चूमते थे। वे उसे महान् आदमी समझते थे लेकिन मैं निश्चित हूँ कि वह एक आलसी और फूहड़ था, और मैंने उसे वहाँ सोता हुआ ही छोड़ दिया। यहाँ के लोग बड़े ही बातूनी और अजीब पाखण्डी हैं।"

इसका मूल इस प्रकार है-

[1]"From Bannaras I went to Patenaw downe the river of Ganges: where in the way we passed many faire townes, and a countrey very fruitfull: and many very great rivers doe enter into Ganges; and some of them as great as Ganges, which cause Ganges to bee of a great breadth, and so broad that in the time of raine you cannot see from one side to the other.

These Indians when they bee scorched and throwen into the water, the men swimme with their faces downewards, the women with their faces upwards, I thought they tied something to them to cause them to doe so: but they say no. There be very many thieves in this countrey, which be like to the Arabians: for they have no certain abode, but are sometime in one place and sometime in another.

Here the women bee so decked with silver and copper, that it is strange to see, they use no shooes by reason of the rings of silver and copper which they weare on their toes.

Here at Patanaw they finde gold in this maner. They digge deepe pits in the earth, and wash the earth in great bolles, and therein they finde the gold, and they make the pits round about with bricke, that the earth fall not in.

Patenaw is a very long and a great towne. In times past it was a kingdom, but now it is under Zelabdim, Echebar the great Mogor. The men are tall and slender, and have many old folks among them: the houses are simple, made of earth and covered with strawe, the streets are very large. In this towne there is a trade of cotton, & cloth of cotton, much sugar, which they cary from hence to Bengala and India, very much Opium & other commodities. He that is chiefe here under the king is called Tipperdas, and is of great account among the people.

Here in Patenau I saw a dissembling prophet which sate upon an horse in the market place, and made as though he slept, and many of the people came and touched his feete with their hands, and then kissed their hands. They tooke him for a great man, but sure he was a lassie lubber. I left him there sleeping. The people of these countries be much given to such prating and dissembling hypocrites."

Patenaw.

" From Bannaras I went to Patenaw [1] downe the riuer of Ganges : where in the way we passed many faire townes, and a countrey very fruitfull : and many very great riuers doe enter into Ganges ; and some of them as great as Ganges, which cause Ganges to bee of a great breadth, and so broad that in the time of raine you cannot see from one side to the other. These Indians when they bee scorched and throwen into the water, the men swimme with their faces downewards, the women with their faces vpwards, I thought they tied something to them to cause them to doe so : but they say no. There be very many thieues in this countrey, which be like to the Arabians : for they have no certaine abode, but are sometime in one place and sometime in another. Here the women bee so decked with siluer and copper, that it is strange to see, they vse no shooes by reason of the rings of siluer and copper which they weare on their toes. Here at Patanaw they finde

[1] Patna, still one of the largest cities in India (H.).

Gold found.

gold in this maner. They digge deepe pits in the earth, and wash the earth in great bolles, and therein they finde the gold, and they make the pits round about with bricke, that the earth fall not in. Patenaw is a very long and a great towne. In times past it was a kingdom, but now it is vnder Zelabdim, Echebar the great Mogor. The men are tall and slender, and haue many old folks among them: the houses are simple, made of earth and couered with strawe, the streetes are very large. In this towne there is a trade of cotton, & cloth of cotton, much sugar, which they cary from hence to Bengala and India, very much Opium & other commodities. He that is chiefe here vnder the king is called Tipperdas, and is of great account among the people. Here in Patenau I saw a dissembling prophet which sate vpon an horse in the market place, and made as though he slept, and many of the people came and touched his feete with their hands, and then kissed their hands. They tooke him for a great man, but sure he was a lasie lubber. I left him there sleeping. The people of these countries be much giuen to such prating and dissembling hypocrites.

1614 ई. में परचास द्वारा प्रकाशित यह वृत्तान्त इस प्रकार है-[2]

"पटना किसी समय एक साम्राज्य था लेकिन वर्तमान में यह मुगलों के शासन में है। यहाँ की महिलाएँ चाँदी और ताँबा से इतनी सजी-धजी हैं कि देखने में विचित्र लगती है और पैरों के अंगूठों में इस तरह अंगूठी पहनती हैं जिस कारण वे जूती नहीं पहन सकती। यहाँ मैंने एक अजीब धार्मिक व्यक्ति देखा जो बाजार में घोड़ा पर बैठा हुआ था लेकिन लगता था जैसे

वह सो रहा हो, अनेक लोग उसके पास आते थे और हाथों से उसके पैर छूते थे और तब उसके हाथ को चूमते थे। वे उसे महान् आदमी समझते थे लेकिन मैंने उसे एक आलसी और फूहड़ के रूप में देखा, और मैंने उसे सोता हुआ ही छोड़ दिया। यहाँ के लोग बडे ही गप्पी और पाखण्डी हैं।

CHAP. 5. ASIA. *The fift Booke.* 475

runneth thorow all their hands, and they lade vp water with their hands, and then the Beachmane tieth their clothes together. After this they goe round about the Cow and Calfe, and giue somewhat to the poore there attending, leauing the Cow and Calfe for the Bramans vse, and offer to diuers of their Idols money: then lying downe vpon the ground, they kisse it diuers times, and go their way. Betweene this and Patenaw are diuers theeues, like the Arabians, without certaine abode.

Patenaw was sometime a Kingdome, now subiect to the *Mogor*. The women here are so decked with siluer and copper, that it is strange to see, and by reason of such rings vpon their toes, they can weare no shooes. Heere I saw a dissembling Prophet, which sate vpon an horse in the Market-place, and made as though he slept, and many of the people came and touched his feet with their hands, and then kissed their hands. They tooke him for a great man, but I saw he was a lazie lubber: and there I left him sleeping. The people heere are great prarers and dissemblers. As I came from Agra downe the Riuer Iemena, I saw also many naked beggers, of which the people make great account; they call them *Sebesebe*. Heere I saw one, which was a monster among the rest, wearing nothing on him, with a long beard, the haire of his head couering his priuities. The nailes of some of his fingers were two inches long: for hee would cut nothing from him p. Neither would he speake, but was accompanied with eighe or ten which spake for him. When any man spake to him, he would lay his hand vpon his breast, and bow himselfe, but speake he would not to the King.

p A right nigard.

In those parts they had many strange Ceremonies. Their Bramans or Priests come to the water, and haue a string about their neckes made with great ceremonies, and lade vp water with both their hands, and turne the string first with their armes within, and then one arme after the other out. Heere also about Iemena, the Gentiles will eat no flesh, nor kill any thing. They pray in the water naked, and dresse their meate and eat it naked: and for their penance they lie flat vpon the earth, and rise vp and turne themselues about thirtie or fortie times, and vse to heaue vp their hands to the Sunne, and to kisse the earth, with their armes and legs stretched out along, their right leg being alwayes before the left. Euery time they lie downe, they score it with their fingers, to know when their stint is ended. The Bramans marke themselues in their foreheads, eares, and throats, with a kind of yellow geare which they grinde; euery morning they doe it. And they haue some old men which goe in the streetes with a box of yellow powder, and marke them which they meet on their heads and neckes. And their wiues doe come, ten, twentie, and thirtie together to the water-side, singing, and there doe wash themselues, and vse their ceremonies, and mark themselues on the foreheads and faces, and carrie some with them, and so depart singing. Their daughters be married, at, or before the age of ten yeates. The men may haue seuen wiues. They are a craftie people, worse then the Iewes.

चूँकि मैं आगरा से यमुना नदी के किनारे होते हुए नीचे की ओर आया था मैंने अनेक खुले बदन भिखारियों को देखा, जिनके प्रति लोगों की बडी श्रद्धा थी, वे उन्हें संन्यासी कहते थे।

मैने यहाँ एक संन्यासी को देखा जो दूसरों से बीच दैत्याकार था। उसने कुछ भी पहना नहीं था, उसकी दाढ़ियाँ बढ़ी हुई थी, उसके गुप्त अंग सर के बाल से ढँके थे। उसकी कुछ उँगलियों के नाखून तो दो इंच लम्बे थे क्योंकि वह उसे काटता नहीं था। वह कुछ बोलता नहीं था, लेकिन वह आठ या दश लोगों के साथ रहता था, जो उनके लिए बोलते थे। जब कोई व्यक्ति उससे बात करता तो वह अपना हाथ अपनी छाती पर रख लेता था और झुक जाता था और बोलता था कि वह राजा के लिए नहीं झुकता है।

इस भू-भाग में अजीब अनुष्ठान मनाये जाते हैं। यहाँ के ब्राह्मण या पुरोहित जल में उतरते हैं और उनके गले के चारों ओर एक धागा होता है, जो बड़े समारोह में पहनाये जाते हैं। वे दोनों हाथों को बंद कर, जल लेकर उस धागे को पहले अपनी बाँहों में लपेट लेते हैं, तब एक बाँह को और बाद में उसे फिर निकाल लेते हैं। यहाँ भी यमुना के किनारे की तरह भद्र लोग न तो माँस खाते हैं न किसी को मारते हैं।

वे खुले वदन जल में खडे होकर प्रार्थना करते हैं, अपना भोजन पकाते हैं और खुले बदन ही खाते हैं। वे अपनी साधना के लिए भूमि पर सपाट लेट जाते हैं और उठते हैं, इस तरह तीस या चालीस बार ऊपर-नीचे होते हैं और सूर्य के समक्ष अपने हाथों को ऊपर उठाते हैं और अपने बाजू और अपने पैरों को फैलाकर धरती को चूमते हैं और अपना दायाँ पैर हमेशा बायें से पहले प्रयोग में लाते हैं। हर बार वे नीचे लेटते हैं और लक्ष्य की समाप्ति जानने के लिए वे अपनी अंगुलियों से गिनती करते हैं।

ब्राह्मण प्रत्येक दिन अपने भाल, कान और गला पर एक पीले रंग की चीज लगाते हैं जिसे वे हर रोज सुबह-सुबह घिसते हैं। उनमें से कई बूढे लोग हैं जो इस पीले बुरादे की पेटी लेकर गलियों में जाते हैं और जो उन्हें मिलते हैं, उनके माथे और गले पर लगा देते हैं।

उनकी पत्नियाँ बीस-तीस की संख्या मे साथ साथ गाती हुई नदी किनारे जाती हैं और नहातीं हैं और अपने अनुष्ठान करती हैं, माथे और चेहरे पर चंदन लगाती हैं। कुछ (जल घडा में) लेकर गाती हुई लौट जाती हैं। उनकी बेटियाँ दस साल की उम्र में या उससे पहले ब्याह दी जाती हैं। आदमी सात पत्नियाँ भी रख सकता है। वे कुटिल लोग हैं और यहूदियों से भी गये गुजरे हैं।''

2. Patenaw was sometime a Kingdome, now subject to the Mogor. The women here are so decked with silver and copper, that it is strange to see, and by reason of such rings upon their toes, they can weare no shooes. Heere I saw a dissembling Prophet, which sate upon an horse in the Market-place, and made as though he slept, and many of the people came and touched his feet with their hands, and then kissed their hands. They tooke him for a great man, but I saw he was a lazie lubber: and there I left him sleeping. The people heere are great praters and dissemblers.

As I came from Agra downe the River Jemena, I saw also many naked beggers, of which the people make great account; they call them *Schesche*. Heere I saw one, which was a monster among the rest, wearing nothing on him, with a long beard, the

haire of his head covering his privities. The nailes of some of his fingers were two inches long: for hee would cut nothing from him (P). Neither would he speake, but was accompanied with eight or ten which spake for him. When any man spake to him, he would lay his hand upon his breast, and bow himselfe, but speake he would not to the King.

In those parts they had many strange Ceremonies. Their Bramans or Priests come to the water, and have a string about their neckes made with great ceremonies, and lade up water with both their hands, and turne the string first with their armes within, and then one arme after the other out. Heere also about jemena, the Gentiles will eat no flesh, nor kill any thing.

They pray in the water naked, and dresse their meale and eat it naked: and for their penance they lie flat upon the earth, and rise up and turne themselves about thirtie or fortie times, and use to heave up their hands to the Sunne, and to kisse the earth, with their armes and legs stretched out along, their right leg being alwayes before the left. Every time they lie downe, they score it with their fingers; to know when their stint is ended.

The Bramans marke themselves in their foreheads, eares, and throats, with a kind of yellow geare which they grinde; every morning they doe it. And they have some old men which goe in the streetes with a box of yellow powder, and marke them which they meet on their heads and neckes.

And their wives doe come, ten, twentie, and thirtie together to the water- side, singing, and there doe wash themselves, and use their ceremonies and mark themselves on the foreheads and faces, and carrie some with them, and so depart singing. Their daughters be married, at, or before the age of ten yeares. The men may have seven wives. They are a crastie people, worse then the Jewes.

विलियम फोस्टर इंडिया ऑफिस के पदाधिकारी एवं हक्लूइत सोसायटी के सम्मानित सचिव थे और हर्टन ने भी उन्हीं के द्वारा उपलब्ध करायी गयी सामग्री के आधार पर फिच के वृत्तान्त पर आधारित पुस्तक तैयार की, बाद में विलियम फोस्टर ने भी अनेक यात्रियों के वृत्तान्तों को संकलित कर अलग से Early travels in India नामक पुस्तक लिखी अत: इन दोनों के विवरण एक ही है। केवल एक स्थान पर Tipperdas नामक व्यक्ति की पहचान फोस्टर ने त्रिपुरा दास से रूप में किया है, जो सूचनाप्रद है। अत: यहाँ विलियम फोस्टर और हर्टन रिले में से केवल हर्टन के उद्धरण को यहाँ संकलित किया गया है।

परचास द्वारा प्रकाशित वृत्तान्त हलाँकि सबसे पुराना है, किन्तु पटना के वर्णन क्रम में उसने कुछ ऐसे अंश को भी पटना का ही वृत्तान्त माना है, जिसे हर्टन ने दूसरे स्थानों का वृत्तान्त माना है। जेसे.

परचास के उद्धरण में जो दूसरा अनुच्छेद है-''चूँकि मैं आगरा से यमुना नदी के किनारे होते हुए.....'' यह अनुच्छेद अन्य स्रोतों में इलाहाबाद के सन्दर्भ में कहा गया है। वहाँ संगम पर नागा संन्यासियों का यह स्वाभाविक वर्णन है जिसका सुन्दर चित्र भी फिच ने दिया है।

इसी प्रकार, तीसरे अनुच्छेद से लेकर शेष सभी वृत्तान्त आगरा का है। हर्टन की पुस्तक में आगरा के इसी वृत्तान्त के साथ एक अतिरिक्त सूचना भी है कि जब लोग एक दूसरे से मिलते हैं तो राम राम संबोधित करते हैं-

When they salute one another, they heave up their hands, to their heads, and say Rame, Rame

इसके संपादक हर्टन ने यहाँ पाद टिप्पणी में इस प्रकार लिखा है-

1 "Ram & Ram! The commonest salutation between two Hindus meeting on the road ; an invocation of the Divinity) Yule & Burrell's Anglo & Indian Glossary)-

आगरा के इस प्रकार वर्णन के बाद प्रयोग आने का उल्लेख स्पष्ट है। अत: यह मानना उचित होगा कि फिच का जो यात्रा वृत्तान्त परचास ने दिया है, वह संदेहास्पद है। इसने अनेक ऐसी बातें छोड दी है, जो फिच के वृत्तान्त के सभी प्रकाशित संस्करणों में समान रूप से है।

इस प्रकार रॉल्फ फिच के प्रामाणिक उल्लेख से पटना शहर के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है कि 1586 के आसपास पटना के प्रमुख प्रशासक का नाम त्रिपुरा दास था। पटना की महिलाएँ चाँदी और ताम्बों के गहनों से लदी रहती थीं। पैरों में इतनी अंगूठियाँ पहनतीं थीं कि उनके लिए जूती पहनना सम्भव ही नहीं था। यहाँ मिट्टी से लोग सोना निकालते थे। फिच ने जिस प्रकार से सोना निकालने का वर्णन किया है उससे स्पष्ट है कि यहाँ की मिट्टी में सोने की खान है। अत: लोग उस गढ़े को ईंट से मढ़ देते थे ताकि मिट्टी न गिरे। साथ ही, पटना एक महत्त्वपूर्ण व्यापारिक केन्द्र था, जहाँ से कपास, सूती कपड़े तथा चीनी का निर्यात होता था।

***

28 अगस्त, 2017 को प्रथम पुण्यतिथि पर श्रद्धाञ्जलि

पिछले वर्ष कामेश्वर सिंह दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति एवं राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित प्रो. ब्रह्मचारी सुरेन्द्र कुमार का निधन 28 अगस्त, 2016 रविवार को हो गया। एल. एस. कॉलेज से सेवा आरंभ कर उन्होंने तिलका मांझी एवं बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय में संस्कृत विभागाध्यक्ष पद पर रह चुके थे। कामेश्वर सिंह दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय में 1986 से 1988 तक कुलपति रहे। बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय में मानविकी संकाय के अध्यक्ष भी रहे। केंद्रीय शिक्षा बोर्ड के सदस्य के अलावा 1969-71 में कॉमनवेल्थ स्कॉलरशिप कमीशन, ग्रेट ब्रिटेन भाषा विज्ञान में पीएचडी के लिए स्कॉलरशिप प्रदान किया गया था। इनकी पुस्तक Sanskrit Syntax And The Grammar Of Case विश्व प्रसिद्ध रचना है। बिहार के सारण जिला के सहाजितपुर गांव में उनका जन्म हुआ था। उनके निधन से संस्कृत जगत् की अपूरणीय क्षति हुई है।

कुनालोपाख्यानम्

श्रीदिव्यावदान में 'कुणालावदान' नामक सत्ताइसवाँ समाप्त

मूल संस्कृत से अनुवादक- डा. (प्रो.) ब्रह्मचारी सुरेन्द्र कुमार
पूर्व कुलपति
कामेश्वर सिंह दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय, दरभंगा

मूलसर्वास्तिवाद विनय ग्रंथ के आधार पर संस्कृत भाषा में लिखित 'दिव्यावदान' बौद्ध कथाओं का ग्रंथ है। महायानी सिद्धांतों पर आश्रित कथानकों का रोचक वर्णन इस लोकप्रिय ग्रंथ का प्रधान उद्देश्य है। समग्र ग्रंथ का तो नहीं, परंतु अनेक कथाओं का अनुवाद चीनी भाषा में तृतीय शतक में किया गया था। शुंग वंश के राजा पुष्यमित्र (178 ई.पू.) तक का उल्लेख यहाँ उपलब्ध होता है। फलतः इसके कतिपय अंशों का रचनाकाल द्वितीय शताब्दी मानना उचित होगा, परंतु समग्र ग्रंथ का भी निर्माणकाल तृतीय शताब्दी के बाद नहीं है। इन कथाओं में ऐतिहासिक तथ्यों के साथ साथ प्रेरक प्रसंग भी हैं, जो आज भी प्रासंगिक हैं। कुनालोपाख्यान ऐसा ही एक उपाख्यान है, जिसमें पूर्व जन्म में किये गये कर्मों के कारण विपत्ति का प्रसंग आया है। इसका अनुवाद संस्कृत के मूर्द्धन्य विद्वान् ब्रह्मचारी सुरेन्द्र कुमार ने किया था। यह बोधकथा 'धर्मायण' के पाठकों के लिए यहाँ संकलित है।

जिस दिन राजा अशोक ने धर्मपंक्ति अर्थात् 84000 स्तूपों की स्थापना करवायी, उसी दिन राजा अशोक की पद्मावती नामक देवी को पुत्र उत्पन्न हुआ, जो जन्म से ही सुन्दर, दर्शनीय, प्रसन्नतादायक था और उसकी आँखें भी अत्यन्त शोभायुक्त थीं।

जब राजा अशोक से निवेदन किया कि, देव! सौभाग्य की वृद्धि के रूप में पुत्र हुआ है तो सुनकर राजा ने मन ही मन सोचा, मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि मौर्यवंश ने उत्कृष्ट ऐश्वर्य पाया। धर्मानुसार राज्य करते हुए मुझे धर्म का उन्नायक पुत्र प्राप्त हुआ।

अतः उसका धर्मविवर्धन नाम रखा गया। जब कुमार के समीप लाया गया, राजा कुमार को देखकर प्रसन्न मन कहने लगा- 'मेरे पुत्र की आँखें अतिपवित्र सुन्दर नीलकमल के समान सुन्दर हैं; जिनसे शोभित इसका मुख पूर्णचन्द्र के समान शोभायमान है।

तब राजा ने मन्त्रियों से कहा 'आपलोगों ने ऐसी आँखें किसकी देखी हैं? मन्त्रियों ने कहा कि देव! मनुष्यों में तो देखी नहीं है। परन्तु स्वामिन्! पर्वतराज हिमालय में कुनाल नामक पक्षी पाया जाता है, उसके समान आँखें हैं। कहा जाता है- 'पर्वतराज हिमालय की पहाड़ी चोटियों में जहाँ प्रवाल पुष्प खिलते हैं, जल भरा रहता है, कुनाल नामक पक्षी वहीं निवास करता है। ये आँखें उसी के मुख की आँखों के समान हैं।'

तब राजा ने कहा कि कुनाल पक्षी को लाया जाय। उसके आदेश को योजन की दूरी तक ऊपर यक्षों ने सुना, नीचे भी योजन तक नागों ने सुना। तब यक्ष शीघ्र ही कुनाल पक्षी को ले आये। अब राजा ने कुनाल पक्षी की आँखों को भरपूर देखा पर कोई अन्तर नहीं पाया। तब राजा ने कहा, कुमार की आँखें कुनाल की तरह हैं, अतः कुमार का नाम कुनाल ही हो। कहते हैं- ''उस राजाधिराज ने आँखों की शोभा से अनुरक्त हो, पुत्र को 'कुनाल' ऐसा कहना प्रारम्भ किया। उसके बाद उस आर्यचरित वाले राजपुत्र का यही नाम पृथिवी पर प्रसिद्ध हो गया।''

क्रमशः जब कुमार बड़ा हो गया, उसकी पत्नी के रूप में काञ्चनमाला कन्या लायी गयी।

जब राजा अशोक कुनाल के साथ कुक्कुटाराम (बिहार) में गया, वहाँ यश नामक सङ्घ के वृद्ध अर्हत् बौद्धश्रमण ने जान लिया कि कुनाल की आँखें शीघ्र नष्ट हो जायेंगी।

उसने राजा से पूछा कि कुनाल को उपयुक्त कार्य में क्यों नहीं लगाते। तब राजा ने कहा कि कुनाल! संघस्थविर जैसा कहते हैं उसका पालन करो।' तब कुनाल ने स्थविर के चरणों में गिरकर पूछा कि स्थविर क्या आदेश है? स्थविर बोले- ''कुनाल! आँखें नश्वर हैं ऐसा जानो।'' कहा जाता है-

''कुमार! (सोचकर) देखो कि आँखें सदा चञ्चल हजारों दुःखों से भरी हैं, जिनके वशीभूत हो असंख्य साधारण लोग अकल्याणकर कार्य करते हैं।''

वह (कुमार) उसी प्रकार ध्यानावस्थित रहने लगा। एक इसीका ही ध्यान कर वह शान्ति से भरा अनुभव करने लगा। वह राजपरिसर में एकान्त स्थान में रहकर आँख आदि इन्द्रियों की तुलना अनित्य (नश्वर) वस्तुओं से करने लगा। अशोक की राजमहिषी (पटरानी) जिसका नाम तिष्यरक्षिता था, उस स्थान पर पहुँची। वह कुनाल को अकेले देखकर उसकी आँखों से आकृष्ट हो देह का आलिंगन कर बोली-''आँखों के प्रीतिकर सौन्दर्ययुक्त तुम्हारे इस शरीर और मनोहर दोनों आँखों को देखकर मेरा हृदय अतिदग्ध हो रहा है जैसे दावाग्नि से पर्वतीय वनक्षेत्र!

यह सुनकर कुनाल दोनों हाथों से कानों को बन्दकर बोला- ''तुम मेरी माता हो, तुम्हें ऐसी बातें कहना उचित नहीं है। अधर्म के मार्ग को छोड़ दें; क्योंकि यह दुःख के मार्ग (पर जाने) का कारण होगा। तब तिष्यरक्षिता ने उस समय उसे न पाकर क्रोधयुक्त हो बोली- ''अरे दुर्बुद्धि वाला, यहाँ काम पीड़ित आयी हुई मुझे जो तुम नहीं चाहते हो, तो शीघ्र ही, निश्चय ही, नहीं रह पाओगे (नष्ट हो जाओगे)।

कुनाल ने कहा- ''हे माता! विशुद्धियुक्त धर्म में रहकर मेरी मृत्यु हो जाय, क्योंकि सज्जनों द्वारा निन्दित मेरे जीवन का क्या प्रयोजन है? जिससे स्वर्ग तथा धर्म का नाश होता हो उस जीवन से क्या लाभ, जो रानियों के द्वारा गर्हित हो, जो मृत्यु के सदृश (का कारण) बन जाय।''

उसके बाद तिष्यरक्षिता कुनाल में दोष ही दोष देखने लगी।

उत्तरापथ में तक्षशिला नगर राजा अशोक के विरुद्ध हो गया। सुनकर राजा स्वयं जाने को तैयार हो गया। तब मन्त्रियों ने कहा कि कुमार (कुनाल) को भेजा जाय।

इसके बाद राजा ने कुनाल को बुलाकर कहा- ''पुत्र! तक्षशिला नगर को शान्त करने (विद्रोह को दबाने के लिए जाओगे?'' कुनाल ने कहा- ''स्वामिन्? अवश्य जाऊँगा।'' तब राजा ने उसकी इच्छा को सुनकर और उस पुत्र के मनोरथ को जानकर (यात्रा को) उसके उपयुक्त समझकर, सुखद यात्रा के लिए आज्ञा दे दी।

इसके बाद राजा अशोक नगर और मार्ग की सजावट कराकर, वृद्ध-रोगी-भिखमंगों को रास्ते से हटवाकर एक ही रथ में कुमार के साथ चढ़कर पाटलिपुत्र से निकल पड़े। कुछ दूर चलकर लौटते समय कुनाल को गले से लगाकर (उसकी) आँखों की ओर देखते हुए रोने लगे और बोले- ''उनकी आँखें धन्य हैं और वे ही आँख वाले हैं, जो सदा पुत्र के मुखकमल को देख पाते हैं।''

जब ज्यौतिषी ब्राह्मण ने देखा कि कुमार (कुनाल) की आँखें शीघ्र नष्ट हो जायेगी और (उधर) राजा अशोक उसकी आँखों में अत्यन्त आसक्त हैं, तो कहने लगा- ''राजकुमार की आँखें पवित्र सुन्दर हैं और राजा उनमें अनुरक्त हैं, शोभा से सम्पन्न सुखद इन दोनों आँखों के नाश को देख रहा हूँ। कुमार के दर्शन पाकर हर्ष मनाता यह नगर स्वर्ग की तरह आनन्दमय लग रहा है; परन्तु उसकी (कुमार की) दोनों आँखों के नष्ट हो जाने पर नगर शोक से आकुलचित्त हो जायगा।''

कुमार क्रमशः तक्षशिला पहुँच गया। यह सुनकर तक्षशिला के निवासियों ने डेढ़ योजनों के घेरे में मार्ग और नगर को सजाकर जलसम्भृत घड़ों के साथ स्वागत किया।

कहा जाता है कि-

सुनकर तक्षशिला के नागरिक रत्नयुक्त जल भरे घड़ों को लेकर सम्मान्य राजकुमार के स्वागत में शीघ्र गये।

स्वागत करने के बाद जोड़कर कहा- ''हमलोग राजा अशोक या राजकुमार के विरुद्ध नहीं हैं। परन्तु दुष्ट स्वभाव वाले मन्त्रिगण आकर हमारा अपमान करते हैं।'' अनन्तर कुनाल को अत्यन्त सम्मान के साथ तक्षशिला में ले जाया गया।

इधर राजा अशोक को गम्भीर रोग हो गया। उसके मुख से दूषित द्रव निकलने लगा। सभी रोमच्छिद्रों से दूषित द्रव बहने लगा और इलाज से ठीक नहीं हो रहा था। तब राजा ने कहा- ''कुनाल को बुलाओ, उसे राजा सिंहासन पर बिठाऊँगा। मेरे इस प्रकार जीने का कोई मतलब नहीं है।''

सुनकर तिष्यरक्षिता सोचने लगी। यदि कुनाल सिंहासनारूढ़ हो जायगा तो मैं जी नहीं पाऊँगी। उसने (राजा से) कहा- ''मैं आपको अच्छा कर दूँगी, पर आप वैद्यों का आना रुकवा दें।' तब राजा ने वैद्यों का आना बन्द करवा दिया। तब तिष्यरक्षिता ने वैद्यों से कहा- ''यदि कोई ऐसे रोग से पीड़ित स्त्री या पुरुष मिले तो उससे मुझे मिलवावें।''

एक अपरिचित आभीर उसी प्रकार के रोग से ग्रस्त था। उसकी पत्नी ने वैद्य से (उसके) रोग के बारे में कहा। वैद्य ने कहा कि रोगी आवे, रोग देखकर दवा बतलाऊँगा। तब आभीर (ग्वाला) वैद्य के पास गया। वैद्य उसे लेकर तिष्यरक्षिता के पास गया। तब तिष्यरक्षिता ने गुप्तस्थान में उसको मरवा डाला। मरवाकर उसके पेट को कटवाकर पक्वाशय को देखा। आँत में एक बड़ा कीड़ा मिला। जब वह ऊपर की ओर चलता था तो बहुत दूषित द्रव निकलता था। जब नीचे जाता था तो नीचे से द्रव निकलता था। तब वहाँ मरीच पीसकर डाला गया। पर वह नहीं मरा, फिर पीपल, अदरक भी पीसकर डाला गया। परन्तु वह मरा नहीं। प्याज पीसकर दिया गया तो स्पर्श होते ही मर गया और अपान मार्ग से बाहर हो गया। इस घटना को उसने राजा को बताया-''देव प्याज खायें, अच्छे हो जायेंगे।'' राजा ने कहा ''मैं क्षत्रिय हूँ, प्याज कैसे खाऊँगा।' देवी ने कहा- ''जीने के लिए इस दवा को खाना चाहिए।''

राजा ने खाया और वह कीड़ा अपानमार्ग से निकल गया। राजा ठीक हो गये। प्रसन्न हो राजा ने तिष्यरक्षिता को वर दिया- ''मैं तुझे कौन-सा वर दूँ।'' उसने कहा- ''सप्ताह भर के लिए मुझे राज्य दे दें।'' राजा ने कहा- ''मैं क्या बनूँगा।'' देवी (तिष्यरक्षिता) ने कहा- ''सप्ताह बीत जाने पर आप ही राजा हो जायेंगे।''

तब राजा ने सप्ताह भर के लिए तिष्यरक्षिता को राज्य दे दिया। उसने सोचा अब मुझे कुनाल से बदला लेना चाहिए। उसने तक्षशिला के नागरिकों के नाम कपटपूर्ण आदेश निकाला कि कुनाल की आँख नष्ट कर दी जाय। कहा गया कि राजा अशोक अत्यन्त क्रूर हैं और तक्षशिला के लोगों को आशा दी है कि मौर्यवंश के कलंक इस शत्रु (कुनाल) की आँखें निकाल दी जाय।''

राजा अशोक का जिस काम (आदेश) का शीघ्र अनुपालन किया जाना होता था, उसपर राजा की दन्तमुद्रा से मुहर लगा दी जाती थी। जब तिष्यरक्षिता सोये हुए राजा के समीप आदेश पर दन्तमुद्रा की मुहर लगाने के विचार से उनके समीप गयी, तब राजा डरकर जग पड़ा। देवी ने पूछा- ''क्या बात है?'' राजा ने कहा- ''देवि! बुरा सपना देखा है। देखता हूँ कि दो गीध कुनाल की आँख निकालना चाहते हैं।'' देवी ने कहा- ''कुमार स्वस्थ रहें।'' इस प्रकार दो बार राजा डरकर जगे और बोले- ''देवि! मैंने अच्छा सपना नहीं देखा है।'' तिष्यरक्षिता ने पूछा 'कैसा स्वप्न है? राजा ने कहा- ''देखता हूँ कि कुनाल के केश, नख और दाढ़ी बढ़ी हुई है और वह नगर में आया है।'' देवी ने कहा- ''कुमार स्वस्थ रहें।''

तिष्यरक्षिता ने राजा के सो जाने पर उस आदेश पर दन्तमुद्रा की मुहर लगाकर तक्षशिला भेज दिया। उधर सोये राजा ने स्वप्न में देखा है कि उसके दाँत गिर गये हैं।

उसके बाद राजा ने उसी रात के बीत जाने पर ज्यौतिषियों को बुलाकर कहा- ''इन सपनों का फल क्या है?'' ज्यौतिषियों ने कहा- ''देव! जो ऐसा सपना देखता है उसके पुत्र की आँखें नष्ट हो जाती हैं। कहा जाता है- जिसके दाँत सपने के अन्त में गिर जाते हैं, उसके पुत्र की आँखें चली जाती हैं और उसका नाश हो जाता है।''

यह सुनकर राजा अशोक आसन से तुरत उठकर चारों दिशाओं में देवताओं से करबद्ध याचना करने लगा और कहा- ''धर्म-संघ-गणों के जो भी देवता हैं, वे प्रसन्न हों, शंसन करें, लोक में श्रेष्ठ रिषि हों वे मेरे पुत्र कुनाल की रक्षा करें।''

वह लेख (आदेश) क्रमशः तक्षशिला पहुँच गया। अनन्तर तक्षशिक्षा के नागरिक और जनपद के निवासी आदेश पाकर कुनाल के गुणों से सन्तुष्ट होने के कारण, अप्रिय कहने का साहस नहीं कर पा रहे थे। क्रूर एवं शीलरहित राजा जब अपने पुत्र को नहीं छोड़ रहा तो हमें कैसे छोड़ेगा? ऐसा देर तक विचार कर कहा- ''मुनि के समान चरित वाले शान्त स्वभाव वाले सभी प्राणियों को कल्याण चाहनेवाले कुमार से जिसे शत्रुभाव होगा, वह किससे द्वेष नहीं करेगा?''

तब उनलोगों ने कुमार से निवेदन किया और लेख आदेश भी दिखाया। तब कुनाल ने उसे पढ़कर कहा- ''निश्चित हो जैसा आपको आदेश मिलता है। तब चण्डाल बुलाये गये कि कुनाल की आँख निकालें। वे करबद्ध बाले उठे- ''हमें साहस नहीं हो रहा, क्योंकि 'जो मनुष्य मूर्खतावश चन्द्रमा की शोभा को नष्ट करने के लिए सोचता हो, वही तुम्हारे चन्द्रमुख से आँखों को निकाल सकेगा।'

इसपर कुमार ने अपना मुकुट उसे देकर कहा- ''यह अपना पारिश्रमिक लेकर मेरी आँखें निकाल दीजिये। कर्मफल तो भोगना ही है।''

इतने में एक कुरूप अनजाना व्यक्ति अठारह दुष्ट व्यापारियों के साथ पीछे-पीछे आया। वह बोला कि मैं (आँखें) निकालूँगा। जब वह कुणाल के समीप ले जाया गया, उसी समय कुणाल को स्थविरों की बातें याद आयीं। वह उनकी बातें याद कर बोल पड़ा- ''तात्त्विक बातें कहनेवाले ने इस विपत्ति का अनुमान कर कहा था कि देखो सब कुछ नश्वर है, किसी का भी शाश्वत अस्तित्व नहीं है। दुःख से मुक्त जिन महात्माओं ने इस धर्म का उपदेश किया था, वे मेरे सुख को चाहनेवाले, हितैषी एवं कल्याणकारी मित्र थे। गुरु के उपेदशों को मन में धारण करनेवाले मुझे नश्वरता समझ में आ गयी है। अतः दोनों आँखों की क्षणिकता को समझ रहा हूँ और हे सौम्य! आँखों के निकाले जाने का मुझे भय नहीं है। जैसा कि राजा चाहते हैं, वैसा करो। मत सोचो कि दोनों आँखें निकाली जायँ या नहीं। नश्वरता आदि पदार्थों से बनी मेरी आँखों की वास्तविकता छिपी नहीं है।''

अनन्तर कुणाल ने उस व्यक्ति से कहा कि- ''इस कारण हे पुरुष! एक आँख निकालकर मेरे हाथ में दे दो।'' जब वह पुरुष कुणाल की आँख को निकालने चला, तब हजारों प्राणी चिल्लाने लगे- ''दुःख की बात है कि निर्मल चाँदनी बिखेरनेवाला यह चन्द्रमा आकाश से डूब रहा है। कमल गुच्छों में से सुन्दर कमल ही तोड़ लिया जा रहा है।''

उन हजारों प्राणियों के रोते रहने पर भी उसने आँख को निकालकर कुणाल के ही हाथ में दे दिया। तब कुणाल उस आँख को लेकर कहने लगा- ''हे मांसपिण्डमात्र! जैसे तुम पहले रूपों को देखते थे, अब क्यों नहीं देख पाते? ऐसे लोग ठगे गये हैं, निन्दनीय हैं, मूर्ख हैं जो तुम्हें आत्मा का अंश मानते हैं। सावधान रहनेवाले विज्ञ तुझे सम्पूर्ण रूप से पानी के बुलबुले के समान पकड़ में नहीं आनेवाले, अस्तित्वविहीन, अद्रव्य रूप मानते हैं। अतः वे दुःखी नहीं होते हैं।''

इस प्रकार सभी प्रकार से नश्वरता के विषय में विचार करते हुए उसने जीव-शरीर के जन्म से दुःखफलदायी (आर्यसत्य) (होने) का भेद पा लिया।

तब तत्त्वज्ञानयुक्त कुणाल ने सत्य जानकर उस पुरुष से कहा- ''अब निश्चिन्त हो दूसरी आँख को निकालो।''

जब उस पुरुष ने कुणाल की दूसरी आँख को निकालकर उसके हाथ में दिया। तब कुणाल मांसनिर्मित आँख के निकाल लिये जाने पर शुद्ध प्रज्ञा रूपी नेत्र के खुल जाने पर बोला- ''मेरी मांसनिर्मित आँख, अत्यन्त दुष्प्राप्य होने पर भी, चली तो गयी पर मुझे अनिन्द्य विशुद्ध ज्ञानरूप आँख प्राप्त हो गयी। यद्यपि मुझे राजा ने पुत्र पद से वंचित कर दिया है तो (तथापि) मैंने महात्मा धर्मराज का पुत्रत्व प्राप्त कर लिया है। शोकदुःखकारक सांसारिक ऐश्वर्य से भ्रष्ट हो कर मैंने दुःखशोक के नाशक धर्म के स्वामित्व को प्राप्त कर लिया है।''

जब कुणाल ने सुना कि ऐसा आदेश पिता का नहीं था, अपितु तिष्यरक्षिता की यह दुरभिसन्धि थी, तब वह कहने लगा- ''तिष्यरक्षिता नामक देवी चिरकाल तक सुखी रहें, (उसकी) आयु और शक्ति बनी रहे। जिसने ऐसा छली व्यवहार अपनाया; परन्तु इसके प्रभाव से मेरा अपना कार्य सिद्ध हुआ मैं। शास्ता का अनुगमन कर सका।''

अनन्तर काञ्चनमाला ने सुना कि कुणाल की आँखें निकाल ली गयी हैं। (वह) सुनकर सभा में प्रवेश कर स्वामी होने के नाते कुणाल के समीप गयी तथा नेत्रविहीन रक्तस्नात शरीर वाले कुणाल को देखकर मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ी। जब पानी छिड़का गया तब उठ पायी। उसके बाद किसी प्रकार सुधि लौटने पर ऊँची आवाज में रोती हुई बोली- ''जो सुन्दर मनोहर नेत्र मुझे देखकर तृप्त होते थे, वे नष्ट होकर दर्शनीय नहीं रहे, लगता है मेरा शरीर प्राणरहित हो गया है।''

तब कुणाल प्रार्थना के स्वर में पत्नी से बोला- ''रोना व्यर्थ है, शोक नहीं करना चाहिए। यहाँ अपने (पूर्व के) कार्यों का फल मिला है।''

(तब) और कहने लगी- ''इस संसार को कर्मफलाश्रित जानकर, मनुष्य को तत्त्वतः दुःखमय मानकर, संसार को प्रियजनों के वियोग से भरा जानते हुए तुम्हें आँसू नहीं बहाने चाहिए।''

अनन्तर कुणाल सपत्नीक तक्षशिला से निकाल दिया गया। जन्म से ही उसका शरीर अत्यन्त कोमल था। उसे कोई काम करने में उत्साह नहीं होता था। केवल वीणा बजाता और गाता था। (अब) इससे (जो) भिक्षा मिलती थी उसे कुणाल सपत्नीक खा लेता था।

बाद में काञ्चनमाला जिस मार्ग से पाटलिपुत्र से लायी गयी थी उसी मार्ग से केवल पति के साथ चलती हुई पाटलिपुत्र पहुँच गयी। जब वह (राजा) अशोक के भवन में प्रवेश करने लगी, द्वारपाल ने दोनों को रोक दिया, तब वे राजा अशोक की वाहनशाला में ठहर गये।

अनन्तर कुणाल रात्रि के अवसान होने पर (रात बीत जाने पर) प्रातः वीणा बजाने लगा। (नश्वर) आँखों के निकाले जाने पर प्राप्त तत्त्वज्ञान के अनुरूप मंगलगीत गाने लगा और कहा- ''जो बुद्धिमान् शुद्ध ज्ञानरूपी दीपक के प्रकाश में नेत्र आदि इन्द्रियों की वास्तविकता को देख लेता है, वह संसार (के आवागमन) से मुक्त हो जाता है। यदि तुम्हारा मन भवजनित दुःख से पीड़ित हो तथा दोषों को नहीं देख पा रहा हो, तथा सुख की इच्छा हो तो इस संसार में शीघ्र आयतनों (इन्द्रियों की आसक्ति) से मुक्त हो जाओ।''

उसके (कुणाल के) गीत की पंक्तियों को राजा अशोक ने सुना। सुनकर प्रसन्नचित्त उसने कहा- ''चिरकाल के पश्चात् सुने गये वीणा-स्वर और कुणाल द्वारा गाये गीत को मैं पहचान गया हूँ। यह कुमार यहाँ आकर भी क्या अपने घर को देखना नहीं चाहता?''

इसके बाद राजा अशोक ने एक अनुचर को बुलाकर कहा- ''ऐ! समझ में आ रहा है? क्या यह गीतध्वनि कुणाल की ध्वनि के समान नहीं है? क्या यह उसकी निपुणता एवं धैर्य को सूचित करती हुई नहीं सुनाई पड़ रही? अतः इस आवाज को सुनकर मैं बारंबार धैर्य खो रहा हूँ, जैसे बच्चे के नष्ट हो जाने पर शावकरहित हस्ती। जाओ कुणाल को लेकर आओ।''

जब वह आदमी वाहनशाला में गया तो नेत्रविहीन, वायु-धूप से संतप्त शरीर वाले कुणाल को पहचान नहीं पाया और राजा अशोक के समीप जाकर बोला- ''देव! यह कुणाल नहीं हैं। यह कोई अन्धा भिक्षुक पत्नी के साथ महाराज की वाहनशाला में टिका है।''

यह सुनकर राजा उद्विग्न हो सोचने लगा- 'जैसे मैंने बुरे स्वप्न देखे थे कि निश्चय ही कुणाल की आँखें नष्ट हो जायँगी। जैसा मैंने पहले दूसरे सपनों को फलीभूत होते देखा था, कुणाल की आँखें नष्ट हो गयी हैं, इसमें सन्देह नहीं।'

इसके बाद रोते हुए राजा ने कहा- ''इस भिक्षु को शीघ्र मेरे निकट लाओ। पुत्र की विपत्ति के विषय में सोचकर मेरा चित्त शान्त नहीं हो रहा है।''

जब उस आदमी ने वाहनशाला में जाकर कुणाल से पूछा तुम किसके बेटे हो, क्या नाम है? तब कुणाल ने उत्तर दिया - ''मौर्यों के कुल के संवर्धक वे राजा अशोक हैं, जिनके अधीन दासी की तरह यह सम्पूर्ण पृथ्वी है। उस राजा का पुत्र मैं कुणाल के रूप में प्रसिद्ध हूँ। सूर्यवंशी धर्मशास्ता बुद्ध के पुत्र के समान हूँ।''

अनन्तर सपत्नीक कुणाल को राजा अशोक के निकट लाया गया। तब राजा अशोक ने नेत्रविहीन, वायु-धूप पीड़ित शरीर वाले, गली (मार्ग) में फेकें चिथड़ों को जोड़कर बने अधोवस्त्र द्वारा अधछिपे कौपीन को धारण किये कुणाल को देखा। दुर्बल आकृति के कारण नहीं पहचान कर पूछा 'तुम कुणाल हो? कुणाल ने कहा-''देव! ठीक ही मैं कुणाल हूँ।''

यह सुनकर राजा मूर्च्छित हो पृथ्वी पर गिर पड़े। कहा जाता है कि इसके अनन्तर कुणाल के मुख को नेत्रविहीन देखकर शोकार्त्तचित्त हो राजा अशोक शोक से दग्ध 'हा पुत्र!' कहते हुए पृथ्वी पर गिर गये।

जब पानी छिड़क कर राजा को उठाकर आसन पर बैठाया गया तब राजा ने किसी प्रकार होश में आकर कुणाल को गोद में बैठाया। कहा जाता है कि अनन्तर राजा क्षणभर ठहरकर गले से कुणाल को लगाया। स्नेह और आँसू से गला भर आया था। कुणाल के मुख को बारबार पोंछकर राजा वहाँ बहुविध रोते रहे-"पहले कुणाल (पक्षी) की तरह दोनों नेत्रों को देखकर पुत्र को कुणाल कहता रहा हूँ। अब इसकी दोनों आँखों को नष्ट हो जाने पर पुनः इसे कुणाल कैसे कहूँ?"

राजा ने पूछा- "ऐ सत्पुत्र! बताओ सुन्दर आँखोंवाले तुम्हारे मुख को, चन्द्र-तारागण से विहीन, शोभारहित आकाश के समान नेत्ररहित, जिसे कोई देखना नहीं चाहेगा, किसने किया? हे पुत्र! दयाभाव से शून्य किसने निष्कारण द्वेष से मुनि के समान सद्बुद्धिवाले तुम्हारे सुन्दर नयनों की दुष्टता भरी ऐसी हालत की है, जो मेरी गहरी पीड़ा का कारण बन गया है। निष्ठुर जन द्वारा छोड़े गये वज्र से दग्ध वन की तरह, तेरे नेत्रों के नाश से उत्पन्न शोक से दग्ध मेरे शरीर के नष्ट हो जाने के पहले ही हे सुमुख! शीघ्र बताओं कि यह कैसे हुआ?"

तब कुणाल ने पिता को झुककर प्रणाम कर कहा- "राज्न! जो बीत गया उसके लिए शोक नहीं करना चाहिए, यह मुनिवचन क्या आपने नहीं सुना है? जिनों (जितेन्द्रिय) तथा प्रत्येक-बुद्ध श्रमणों को भी दृढ़ कर्मबन्धनों से मुक्ति नहीं मिली। जो साधारण जन हैं वे भी (कर्मों का) फल पाते हैं क्योंकि प्राणियों के कर्मों का फल नष्ट नहीं होता। यह तो अपने कर्मों का फल है, कैसे कहूँगा कि यह दूसरों ने किया है। महाराज मैंने ही अपराध किया और अपराधी भी हूँ। दुःखजन्य फलों को भोग कर मूल्य चुका रहा हूँ। शस्त्र-वज्र-अग्नि-विष तथा सर्प अकारण कष्ट देकर पीड़ा नहीं पहुँचाते। हे नृप! अमंगलकारक दुःख आते हैं और उनका लक्ष्य शरीरधारियों का शरीर ही होता है।"

इस पर राजा शोकाग्नि से संतप्त हृदय हो बोला- "किसने (मेरे) पुत्र की आँखें निकाली? मेरे लिए किसने जीवन के माधुर्य को नष्ट करने का प्रयास किया? मेरे हृदय में तीव्र उग्रतम शोकाग्नि धधक रही है, पुत्र! शीघ्र बताओ, किसे दण्ड दूँ?"

जब राजा अशोक ने सुना कि तिष्यरक्षिता ने यह अकार्य किया है, (राजा ने सुनकर) तब तिष्यरक्षिता को बुलाकर कहा- "ऐ अभागिन! तुम पृथ्वी में क्यों नहीं धँस जाती, (तेरा) सिर परशु के प्रहार से काट डालूँगा। भीषण पाप कर्म करनेवाली तुझको, अधर्म से प्राप्त लक्ष्मी को छोड़ देनेवाले आत्माभिमानी व्यक्ति की तरह, मैं त्याग दे रहा हूँ।"

इसके बाद क्रोधाग्नि से जलते हुए राजा ने तिष्यरक्षिता को देखकर कहा- "तुम्हारी आँखें निकालकर (तेरे) शरीर को तीक्ष्ण नखों से टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा। या आरे से इसकी नाक काटूँगा, या इसकी जिह्वा को छुरी से काट दूँगा, या विषपूर्ण घट में इसे डाल दूँगा" इस प्रकार राजा ने अनके प्रकार से मार डालने की बात कही।

सुनकर करुणामय महात्मा कुणाल से गुरुजन (पिता) से कहा - "यदि तिष्यरक्षिता ने नीच काम किया है, तो आप उच्च कर्म कीजिए और स्त्री की जान न लें। मैत्री के समान दूसरा (सत्कर्म) फल नहीं है। हे स्वामिन्! बुद्ध ने तितिक्षा का ही उपदेश किया है।"

(इसके पश्चात्) पुनः पिता को प्रणाम कर कुमार ने हाथ जोड़कर मधुरवाणी में कहा- ''हे राजन्! मुझे लेशमात्र भी दुःख नहीं है। घोर अपकार होने पर भी कोई क्रोधजन्य सन्ताप नहीं है। जिसने पहले स्वयं मेरी आँखें निकलवायीं, यदि उस माता के प्रति मेरा मन सचमुच ही प्रसन्न है, तो शीघ्र ही मेरी दोनों आँखें पूर्ववत् हो जायँ।''

इतना कहते ही, पहले से अधिक शोभादायक दोनों आँखें ठीक हो गयीं। तब तक राजा अशोक ने तिष्यरक्षिता को क्षमा न कर लाह निर्मित प्रकोष्ठ में डलवाकर मार डाला। तक्षशिला के नागरिक भी मार डाले गये। भिक्षुओं को सन्देह जगा। उन्होंने सभी सन्देहों का समाधान करनेवाले आयुष्मान् स्थविर उपगुप्त से पूछा- ''कुणाल ने कौन-सा काम किया था, जिसकी परिणति आँखों के निकाले जाने में हुई।''

स्थविर बोले- ''तब आप लोग सुनिए। बहुत पहले वाराणसी के मार्ग में एक आखेटक था। वह पर्वत (हिमालय) पर जाकर हरिणों को मारता था। वह एक समय पर्वत पर गया। वहाँ उसने एक गुफा में प्रविष्ट बादल की कड़क से गिर गये (बेसुध) पाँच सौ हरिणों को पाया। उसने जाल में सभी को फँसाया। उसके मन में बात आयी। यदि सभी को मार दूँगा तो मांस सड़ जायगा। उसने पाँच सौ हरिणों की आँखें निकाल लीं। नेत्रविहीन वे कहीं भाग नहीं सके थे। इस प्रकार उसने बहुत से हरिणों की आँखें निकालीं। भद्रजनों! आप क्या सोच रहे हैं? जो यह आखेटक था, वही कुणाल है। कहाँ उसने अनेक सौ हरिणों की आँखें निकाल लीं। उस कर्म के फल के रूप में हजारों वर्षों तक नरक में दुःख भोगने के बाद तदनन्तर कर्मफल के चलते पाँच सौ जन्मों में उसकी (कुणाल की) आँखें निकाली गयीं।''

प्रश्न उठा कि कौन-सा कर्म (कुणाल ने) किया जिसकी परिणति उच्चकुल में जन्म लेने के रूप में हुई तथा वह प्रासाद में रहा और उसने सत्य का साक्षात्कार भी किया।

उपगुप्त ने कहा-''तब भद्रलोक! आप सुनें। बहुत पहले बीते युग में चालीस हजार वर्षों की अवधि तक प्रजाजनों पर शासन कर लेने पर, पुनर्जन्म हो जाने पर संसार में क्रकुच्छन्द नामक सम्यक्-सम्बुद्ध का जन्म हुआ। जब सम्यक्-सम्बुद्ध क्रकुच्छन्द ने बुद्ध से सम्बद्ध कार्य कर चुकने पर दोष रहित निर्वाण की स्थिति प्राप्त कर ली, तब उसके लिए अशोक राजा ने चार प्रकार के रत्नों से स्तूप का निर्माण कराया।

जब राजा अशोक गुजर गये, अश्राद्ध नामक राजा राज्याधिपति बना। वे रत्न चोरों द्वारा लूट लिये गये। धूलधूसरित काष्ठमात्र बच गया। वहाँ जनसमूह जाकर यह टूट-फूट देखकर शोक में डूब गया। उस समय एक श्रेष्ठिपुत्र था। उसने कहा-''क्यों रोते हो?''उनलोगों ने कहा-''क्रकुच्छन्द! सम्यक्-सम्बुद्ध का स्तूप चार प्रकार के रत्नों से मण्डित था। वह इस समय जीर्ण-शीर्ण है।'' अनन्तर वहाँ क्रकुच्छन्द द्वारा सम्यक्-सम्बुद्ध की देह के प्रमाण की प्रतिमा, जो टूट-फूट गयी थी, उसका संस्कार किया गया। सम्यक् प्रणिधान प्रार्थना की गयी। जैसा क्रकुच्छन्द शास्ता था वैसा ही शास्ता (आप) प्राप्त करें। उसे अप्रसन्न न करें।

आपलोग क्या सोच रहे हैं? जो श्रेष्ठिपुत्र था वही कुणाल है। जहाँ इसने क्रकुच्छन्द के स्तूप का संस्कार किया, उस कर्म की परिणति के रूप में उच्चकुल में उत्पन्न हुआ। चूँकि प्रतिमा का संस्कार किया, उस कमर्फल के रूप में प्रासाद में निवास मिला। जो प्रणिधान किया उस कर्म की परिणति के रूप में, जैसे शाक्यमुनि सम्यक् सम्बुद्ध थे, वैसा ही शास्ता मिला। सत्यदर्शन भी हुआ।''

(श्रीदिव्यावदान में 'कुणालावदान' नामक सत्ताइसवाँ समाप्त)

❖

रामायणकालीन अयोध्या नगरी

❑डा.मोना बाला
एम.ए.(संस्कृत), पी-एच्.डी.

रामायण महाकाव्य में रघुवंशी राम की कथा मुख्य है और राम का सीधा सम्बन्ध अयोध्या नगरी से है। राम अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र थे तथा उनके वंश के अन्य पूर्वजों ने भी अयोध्या में ही राज किया। राम के क्रिया-कलापों की साक्षी रही अयोध्या का वर्णन महर्षि वाल्मीकि ने बड़ी सुरम्यता से किया है। रामायण काल में दशरथ का राज्य प्रसिद्ध था, इस कारण ही अयोध्या नगरी में क्या-क्या विशेष रही होगी इसे जानने की उत्सुकता होती है।

कोशल नामक जनपद जो सरयू नदी के किनारे बसा था, उसी में एक अयोध्या नगरी थी, जिसे स्वयं मनु ने बसाया था जो लोकों में विख्यात थी-

अयोध्या नाम नगरी तत्रासील्लोकविश्रुता।
मनुना मानवेन्द्रेण या पुरी निर्मिता स्वयम्।।

(रा.-1/5/6)

यह सुन्दर नगरी बारह योजन लम्बी और तीन योजन चौड़ी थी, वहाँ बाहर के जनपदों में जाने के लिए एक विशाल राजमार्ग था, वह उभयपार्श्व (दोनों ही तरफ से) विविध वृक्षावलियों से शोभमान होता था, राजमार्ग का सुन्दर विभाग किया गया था, जो नगरी की शोभा बढ़ाता था। नगर की बनावट में राजमार्ग का बहुत महत्त्व रहता है, जो अयोध्या नगरी में भी उपलब्ध है।

अयोध्या की तुलना इन्द्र की अमरावतीपुरी से की गई है, जो स्वर्ग में है। अयोध्या नगरी राजा दशरथ के द्वारा विशेष रूप से बसायी गयी थी उसका वर्णन इस प्रकार उपलब्ध है-

तां तु राजा दशरथो महाराष्ट्रविवर्धनः।
पुरीमावासयामास दिवि देवपतिर्यथा।।

(रा.-1/5/9)

यह नगरी राजा दशरथ के धर्म एवं न्याय के बल पर बनी हुई थी।

अयोध्या एक सुरक्षित नगरी थी, इसकी सुरक्षा हेतु बड़े-बड़े फाटक एवं किवाड़ लगे हुए थे। अधिकांश प्राचीन नगरी की सुरक्षा में बड़े फाटकों का वर्णन उपलब्ध होता है। नगर में अलग-अलग बाजार थे, जिससे उस नगरी के आर्थिक रूप से उन्नत होने का संकेत प्राप्त होता है। यहाँ सभी कलाओं के शिल्पी थे, इस कारण हर तरह की वस्तुएँ यहाँ प्राप्त रही होगी। इस नगरी की सुरक्षा हेतु अस्त्र-शस्त्र एवं यन्त्र सभी विद्यमान थे, जो नगर की आवश्यकता हेतु काम में लाए जाते थे।

इस नगर में हर प्रकार के कार्य में लगे नागरिक वास करते थे। जहाँ एक तरफ शिल्पियों का समूह था वहीं स्तुति-पाठ करने वाले सूत और वंशावली का बखान करनेवाले मागध रहा करते थे। स्पष्ट है कि इस नगरी में समर्थ जनों का एक बड़ा समूह वास करता था तथा धर्म पर विशेष ध्यान दिया जाता था। यह अत्यंत ही सुन्दर नगरी थी-

श्रीमतीमतुलप्रभाम्

इस नगरी में ऊँची- ऊँची अट्टालिकाएँ थी, जिनके ऊपर ध्वज लहराया करता था मानों अपनी समृद्धता का भान एवं मान करा रहा हो। अयोध्या में तत्कालीन समय में तोपों का वर्णन उपलब्ध है जो उसकी सैन्य-समृद्धि का प्रतीक है-

उच्चाट्टालध्वजवतीं शतघ्नीशतसंकुलाम्

(वा.रा.- 1/5/11 का उत्तरार्ध)

इस नगरी के चारों ओर गहरी खाई खुदी थी, जिसमें प्रवेश करना या लाँघना अत्यंत दुष्कर था।

दुर्गगम्भीरपरिखां दुर्गामन्यैर्दुरासदाम्।

(वा.रा.- 1/5/11 का पूर्वार्ध)

अयोध्यापुरी में राजा दशरथ ने योग्य एवं वीरों को बसाया था। वे विशिष्ट वीर थे, जिनके आगे-पीछे कोई न हो, शब्द-वेधी बाण द्वारा बेधने योग्य हो, अथवा अपने लक्ष्य वेधने में समर्थ हो, अस्त्र-शस्त्र के प्रयोग में कुशल हो वन में गर्जते मतवाले सिंह, व्याघ्रों आदि को अपने तीक्ष्ण बाणों के बल पर मार देनेवाले हो। ऐसे सहस्त्रों वीरों से अयोध्या पटी थी। अयोध्या नगरी के पास वीर सैनिकों की प्रचुर संख्या थी।

शौर्य की अधिकता के कारण अग्नि के समान दुर्धर्ष, कुटिलता से रहित, अपमान को सहन करने में असमर्थ तथा अस्त्र-शस्त्रों के ज्ञाता योद्धाओं का समूह सदैव इस पुरी की शोभा बढ़ाते रहते थे।

योधानामग्निकल्पानां पेशलानाममर्षिणाम्।
सम्पूर्णा कृतविद्यानां गुहा केसरिणामिव॥

(वा.रा.- 1/6/21)

किसी भी राष्ट्र की सुरक्षा का भार उस राष्ट्र के उद्भट योद्धाओं की शक्ति पर निर्भर करता है।

इस नगरी में गगनचुम्बी प्रासाद पर्वतों के समान जान पड़ते थे। महलों का निर्माण नाना प्रकार के रत्नों से हुआ था तथा बहुसंख्य कूटागारों (गुप्तगृहों) स्त्रियों के क्रीड़ा-भवन से परिपूर्ण था। इस नगर के भवनों की भव्यता को प्रदर्शित करती है। यहाँ के महलों पर सोने के पानी चढ़े होने का वर्णन प्राप्त होता है। इस नगर में सतमहले प्रासाद हुआ करते थे जो महल निर्माण के विशेष तकनीक एवं कौशल के परिपक्व होने की सूचना देते है। गोविन्द राज की टीका में 'अष्टापद' शब्द का अर्थ द्यूतफलक किया है अर्थात् अयोध्या नगरी का बसाव द्यूत के लिए बिछाये खेलपट- जैसा था अर्थात् बीच में राजमहल होगा और चारों ओर राजवीथियाँ थी। यह पुरी सुन्दर शोभा वाली थी। यहाँ के महल अन्दर से भी अत्यन्त सुन्दर थे-

सुनिवेशितवेश्मान्तां नरोत्तमसमावृताम्।

(वा.रा.- 1/5/19 का उत्तरार्ध)

इस नगरी में बहुत-सी ऐसी नाटक मण्डलियाँ थी, जिनमें केवल स्त्रियाँ ही नृत्य एवं अभिनय करती थीं। इस वर्णन से ऐसा प्रतीत होता है कि नगर में स्त्रियाँ की स्थिति अच्छी थी वह अपने मन का कोई श्रेष्ठ कार्य स्वयं ही कर सकती थी। इस भूमण्डल पर सदैव विभिन्न प्रकार के वाद्यों की ध्वनियाँ गुंजायमान होती रहती थी-

दुन्दुभीभिर्मृदङ्गैश्च वीणाभिः पणवैस्तथा।
नादितां भृशमत्यर्थं पृथिव्यां तामनुत्तमाम्॥

(वा.रा.- 1/5/18)

इस नगरी की जनसंख्या अत्यंत सघन थी साथ ही यहाँ निवास करनेवाले अत्यंत गुणीजन थे। यहाँ अग्निहोत्री, शम-दम आदि उत्तम गुणों से सम्पन्न तथा छहों अङ्गों सहित सम्पूर्ण वेदों के पारङ्गत विद्वान ब्राह्मण रहते थे, वे ब्राह्मण सहस्त्रों का दान करनेवाले और सत्य में तत्पर रहनेवाले थे अयोध्या में रहनेवाले नागरिकों की दशा अत्यन्त सुखद थी। यहाँ के नागरिकों में कोई भी कुण्डल, मुकुट और पुष्पहार से रहित नहीं था। किसी भी व्यक्ति के पास भोग सामग्री की कमी नहीं थी। कोई भी पुरुष ऐसा न था जिसने अपने शरीर पर चन्दन का लेप एवं सुगन्ध का प्रयोग न किया हो।

यहाँ धर्म, अर्थ एवं काम का सम्पादन करते हुए राजा अपने श्रेष्ठ कर्मों से अपने कर्त्तव्य का पालन करते थे।

इस नगरी में कहीं भी कामी, कृपण, क्रूर, मूर्ख एवं नास्तिक नजर नहीं आते थे। स्पष्ट है कि यहाँ के नागरिक कितने सुजान रहे होगें-

कामी वा न कदर्यो वा
नृशंसः पुरुषः क्वचित्।
द्रष्टुं शक्यमयोध्यायां
नाविद्वान् न च नास्तिकः।।

(वा.रा.-1/6/8)

यहाँ के स्त्री एवं पुरुषों में सदाचार धर्मपरायणता, संयम, शील एवं निर्मलता- जैसे गुण शोभा पाते थे। इस नगर का गृहस्थ अत्यंत सम्पन्न था, इसकी चर्चा बारम्बार की गई है। यहाँ अपवित्र भोजन करनेवाला, दान न देनेवाला कोई नहीं था, मन का संयमी पुरुष ही दृष्टिगत होता था। उस काल में सम्पन्न लोग बाजूबन्द, निष्क (स्वर्ण पदक) तथा हाथ में आभूषण पहना करते थे, जो यहाँ के नागरों में भी दृष्टिगत होता है।

यह नगरी अत्यंत पवित्र थी, यहाँ क्षुद्र, चोर, आचार शून्य एवं वर्णसंकर प्राप्त नहीं होते थे इसे इस प्रकार कहा गया है -

...न क्षुद्रो वा न तस्करः।
...न चावृतो न संकरः। (वा.रा.-१/६/१२)

यह नगरी अत्यंत शिक्षित नागरिकों से भरी पड़ी थी। यहाँ वेदों के छः अंगों को जाननेवाला, क्रतहीन, सहस्त्रों कम दान देने वाले, दीन, विक्षिप्त-चित आदि कोई भी कष्ट नहीं पाता था। यहाँ चारों वर्ण बहुत अच्छे से वास करते थे, यहाँ क्षत्रिय ब्राह्मणों के मुँह जोहते थे, वैश्य क्षत्रियों की आज्ञा पालन करते थे और शूद्र अपने कर्तव्य का पालन करते हुए निवास करते थे।

इस नगरी की रक्षा स्वयं राजा दशरथ करते थे, जैसे बुद्धिमान राजा मनु ने पुरा काल में किया था। यहाँ शौर्यवान, अकुटिल, अपमान सहने में असमर्थ तथा अस्त्र-शस्त्र के ज्ञाता योद्धा समुदाय, था जो नगरी की रक्षा हेतु सदैव तत्पर रहा करता था।

यहाँ काम्बोज एवं बाह्लीक देश के उत्तम कोटि के घोड़े उपलब्ध थे, सिन्धुनद के निकट उत्पन्न होनेवाले दरियाई घोड़े थे जिनकी तुलना इन्द्र के उच्चैःश्रवा के समान बताई गई है। विन्ध्य और हिमालय पर्वतों में उत्पन्न अत्यंत बलशाली मदमत्त गजराजों से यह नगरी परिपूर्ण थी। यहाँ उत्तम कोटि के गज उपस्थित थे-

ऐरावतकुलीनैश्च महापद्मकुलैस्तथा।
अञ्जनादपि निष्क्रान्तैर्वामनादपि च द्विपैः।।

(वा.रा. -1/6/24)

गजों की अन्य जातियों का वर्णन इस नगरी के संबंध में किया गया है, जो अत्यंत रोचक है। यहाँ भद्र, मन्द्र एवं मृग जाति के

गज थे तथा उनकी संकर प्रजाति भी अयोध्या में उपलब्ध थी।

इस नगरी के राजा दशरथ उसी प्रकार यहाँ शासन चलाते थे जैसे नक्षत्रलोक का शासन चन्द्रमा चलाते हैं।

अयोध्या नगरी का संबंध रघुवंशी राम से है राम-जन्म, श्रीराम का विवाह कर लौटना, वनगमन एवं अयोध्या के शासक रूप में विराजमान होना। यदि रामकथा की मुख्य बिन्दुओं पर दृष्टिपात किया जाए तो अयोध्या एक बहुत बड़े स्थान ग्रहण करेगी।

अयोध्या का राजपरिवार एक आदर्श परिवार के रूप में स्मरणीय है और राम एक श्रेष्ठ एवं आदर्श व्यक्तित्व के रूप में है। राजा दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र के रूप में राम का जन्म हुआ। तब अयोध्या में बहुत बड़ा उत्सव हुआ लोगों की भारी भीड़ एकत्र हो गई गलियाँ एवं सड़कें खचाखच भर गईं।बहुत से नट और नर्तक वहाँ अपनी कला का प्रदर्शन करने लगे।

उत्सवश्च महानासीदयोध्यायां जनाकुलः।
रथ्याश्च जनसम्बाधा नटनर्तकसंकुलाः।।

(वा.रा.-1/18/18)

वहाँ लोग गाने बजाने लगे, दीन-दुखियों के लिये लुटाये गए सभी रत्न बिखरे पड़े थे। राजा दशरथ ने इस अवसर को विशिष्ट बनाते हुए सूत, मागध और वन्दीजनों को देने योग्य पुरस्कार दिये तथा ब्राह्मणें को सहस्त्रों गोधन प्रदान किये।

सीतास्वयम्बर में उपस्थित राम के द्वारा सीता-वरण एवं अन्य तीनों राजकुमारों का विवाह हुआ। राजा दशरथ पुत्रों एवं वधुओं को लेकर अयोध्या नगरी पहुँचे। उस समय पुरी के चारों ओर ध्वज-पताकाएँ फहरा रहीं थीं। सजावट से नगर रमणीय लग रहा था। भांति-भांति के वाद्य-यंत्र बजाएँ जा रहे थे। सड़कों पर जल का छिड़काव हो रहा था, यत्र-तत्र पुष्पों के ढेर बिखरे हुए थे। नगरवासी प्रवेश द्वार पर मांगलिक उपहार लेकर खड़े थे। राजा की आगवानी में उसकी प्रजा खड़ी थी यह स्थिति राजा एवं प्रजा के बीच संबंधों की उद्घोषणा करती है। अयोध्या में नववधुओं का स्वागत मंगलगीतों से किया गया; उनसे देवता-पूजन एवं बाद में वन्दनीय सास-ससुर के चरणों में प्रणाम कराया गया। अर्थात् नगरी में लोक संस्कृति के भी सुलभ दर्शन प्राप्त होते हैं।

दशरथ के द्वारा युवराज राम की राज्याभिषेक की तैयारी की जाती है, परन्तु महारानी कैकेयी के द्वारा राम के वनवास के लिए राजा दशरथ को मना लिया जाता है। जिसके बाद राजा दशरथ राम को बुलाते हैं सुमंत्र द्वारा सूचना मिलने पर राम राजप्रसाद की ओर आ रहे हैं, तो अयोध्या के राजमार्गो की सुन्दरता को निहारते आए हैं। मार्ग में हाथी और घोड़े से भरे पड़े हैं राज मार्ग के दोनों ओर रत्नों से भरी दुकानों का वर्णन उपलब्ध होता है।

प्रभूतरत्नं बहुपण्यसंचयं
ददर्श रामो विमलं महापथम् ।

(वा.रा.-2/16/47 का उत्तरार्ध)

राम जब रथ पर सवार पिता से मिलने जा रहे थे तो उन्होंने देखा सारा नगर ध्वजा और पताकाओं से सुशोभित हो रहा है। चारों ओर अगुरु नामक धूप की सुगन्ध छा रही थी तथा असंख्य नागर दृष्टिगत हो रहे थे। वास्तव में यह दृश्य राम के राज्याभिषेक के पहले की

है अयोध्या सजी संवरी है, उत्सव एवं उत्साह का समिश्रण व्याप्त है।

राम वनगमन हेतु जब निकले हैं तो नगर की संवेदनशीलता दृष्टिगत होती है उस दिन अग्निहोत्र बंद हो गए, गृहस्थों के घर भोजन नहीं बना, प्रजाओं ने कोई काम नहीं किया, सूर्यदेव अस्ताचल को चले गए, हाथियों ने मुँह में लिए निवाले (घास) को छोड़ दिया, गौओं ने बछड़ों को दूध नहीं पिलाया, अपने प्रथम पुत्र के जन्म पर भी जननी प्रसन्न न हुई।

शोकपर्यायसंसप्तः सततं दीर्घमुच्छवसन्।
अयोध्यायां जनः सर्वश्चुक्रोश जगस्वीपतिम्।।

(वा.रा.-2/41/16)

पूरी अयोध्या का शोकाकुल होना कुछ निर्देश करता है, अयोध्या श्रीराम रहित हो कर भय और शोक से व्याप्त होकर श्रीहीन-सी हो गई है किसी संवेदनशील नगरी में ही ऐसा दृश्य दिख सकता है।

चौदह वर्ष वनवास से लौटे राम पुनः जब अयोध्या में आए तो पुनः नगरी में उनका भव्य स्वागत हुआ।

तुरगाणां सहस्त्रैश्च मुख्यैर्मुख्यतरान्वितैः।
पदातीनां सहस्त्रैश्च वीराः परिवृता ययुः।।

(वा.रा.-8/124/14)

राम के हेतु अयोध्या सजी-धजी थी। एक बार पुनः उत्सव का माहौल था। भरत के द्वारा राम को अयोध्या का राज-कार्य सम्भालने की विनम्र प्रार्थना राम द्वारा स्वीकृत होती है और नगर-यात्रा पर सभी स्वजनों के साथ निकले हैं। राम के स्वागत में नगर भवन की पताकाएँ उठाई गई है। राम के द्वारा स्वर्णपात्रों का आदान-प्रदान इस बात का द्योतक है कि अयोध्या का राज्य अपनी राजलक्ष्मी से परिपूर्ण था। अयोध्या का राज्य अच्छी तरह चले तथा नगरी की समृद्धि हो, इसके लिए अशोक, विजय और सिद्धार्थ- जैसे योग्य मंत्री मंत्रणा में जुट गए थे।

राम के शासन काल की अयोध्या का वर्णन सबसे सुन्दर है-

आसन् प्रजा धर्मपरा रामे शासति नानृताः।
सर्वे लक्षणसम्पन्नाः सर्वे धर्मपरायणाः।।

(वा.रा.-6/128/105)

अयोध्या वह प्राचीन नगरी है, जो इक्ष्वाकु कुल के राजाओं द्वारा सेवित रही। रघुनायक राम के स्नेह से सुशोभित रही। वह प्राचीन भारत की सब प्रकार से सम्पन्न नगरी थी, अयोध्या।

अयोध्या नगरी का वर्णन हृदय को स्पन्दित करनेवाला है। इस नगरी में श्रेष्ठ नगरी के सारे गुण विराजमान हैं अयोध्या प्राचीन काल में समस्त लोक का आकर्षण पाने में समर्थ नगरी रही होगी।

❖

पता-
जस्टिश राजकिशोर पथ
न्यू एरिया, कदम कुआँ
पटना- 800003
Email: mona.bala123@gmail.com

पंचमुखी भगवान सदाशिव

श्री युगल किशोर प्रसाद

हिन्दी के वयोवृद्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् से सम्मानित, प्रकाशित रचनाएँ- **एकलव्य** (नाटक), **श्रेय से प्रेय** (उपन्यास), **कुम्हरे की बतिया** (कहानी संग्रह), **संहिता** (निबन्ध संग्रह)

पौराणिक साहित्य में जब भगवान् शिव के व्यापक स्वरूप का वर्णन हुआ और उन्हें चराचर जगत् का आधार माना गया, एकादश-द्वादश रुद्र की परिकल्पना बनी तो उनके पाँच मुखों का प्रतिपादन हुआ। भगवान् सदा शिव के पाँचो मुखों को पाँच-तत्त्व से जोड़ने के कारण मूर्ति-विज्ञान एवं चित्रकला के क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के रूपों की अवध रणा पनपी। यहाँ लेखक ने शास्त्र मूर्ति-विज्ञान एवं चित्रकला की परम्परा के बीच तालमेल बैठाकर भगवान् सदाशिव के पाँच मुखों का गम्भीर विवेचन किया है।

त्रिदेवों में सदाशिव का स्थान अत्युच्च है। ये त्रिदेव उत्पत्ति, स्थिति और नव सृजन हेतु संहार के कारक आदिदेव हैं, जो तत्त्वत: एक ही हैं। आज के श्रम विभाजन की तरह इसमें भी एक तरह से श्रम विभाजन ही है। आदिकाल से ये त्रिदेव जनजीवन में प्रतिष्ठित होकर सृष्टि-कर्म का संचालन करते आए हैं। मानवी सृष्टि आज मैथुनी सृष्टि नही है, यह आध्यात्मिक प्रक्रिया है, जीवन-जगत् की उत्पत्ति का कारक है। आवश्यकता के अनुसार इनका महत्त्व बदलता रहता है, यही इस बात का प्रमाण है कि त्रिदेव तात्त्विक रूप से अभिन्न हैं, मात्र इनके अलग-अलग रूप हैं। सदाशिव की नित्य सत्ता है, जिनका क्षरण कभी नहीं होता, उनकी स्थिति सदा एक समान बनी रहती है, इसलिए ये सदाशिव हैं। एक कथा में देवताओं-इंद्र, अग्नि, वायु आदि का गर्व भंजन सदाशिव ने प्रकाश पुंज के रूप में उपस्थित हो कर किया था। कोई देवता इस प्रकाश पुंज के आदि और अंत का पता नहीं लगा सके। यह सदाशिव का ही विराट्तम और सर्वत्र व्यापक रूप था। धरती से आकाश तक, दशों दिशाएँ उस प्रकाश पुंज के दिव्य आलोक से प्रकाशित थीं। ब्रह्मा का एक दिन होता है। भगवान् विष्णु और भगवान् सदाशिव नित्य सत्ताएँ हैं। अपना प्रतिपाद्य भगवान् सदाशिव हैं, इसलिए उनके स्वरूप पर यथामति प्रकाश डालने की चेष्टा की जा रही है, किन्तु जिस सदाशिव के आदि-अंत का पता देवता नहीं पा सके, इन पंक्तियों के लेखक- जैसा संसारी साधारण जीव का प्रयास पिपीलिका के सागर-लंघन के दुस्साहसिक प्रयास के अतिरिक्त और क्या हो सकता है? अत: भगवान् सदाशिव की अहैतु की कृपा का ही एकमात्र भरोसा है। वैसे, भगवान् सदाशिव के बारे में साधकों और प्राचीन ग्रंथों में बहुत कुछ लिखा कहा जा चुका है, उसी के आधार पर चर्चा की जा रही है।

चर्चा स्वामी शङ्कराचार्य रचित शिवपंचाक्षर स्तोत्रम् को उद्धृत कर की जा रही है।

नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय
भस्माङ्गरागाय महेश्वराय।
नित्याय शुद्धाय दिगम्बराय
तस्मै 'न'काराय नमः शिवाय।।

मन्दाकिनीसलिलचन्दनचर्चिताय
नन्दीश्वरप्रमथनाथमहेश्वराय ।
मन्दारपुष्पबहुपुष्पसुपूजिताय
तस्मै 'म'काराय नमः शिवाय।।

शिवाय गौरीवदनाब्जवृन्द-
सूर्याय दक्षाधवरनाशकाय।
श्रीनीलकण्ठाय वृषध्वजाय
तस्मै 'शि'काराय नमः शिवाय।।

वसिष्ठकुम्भोद्भवगौतमार्य -
मुनीन्द्रदेवार्चितशेखराय ।
चन्द्रार्कवैश्वानरलोचनाय
तस्मै 'व'काराय नमः शिवाय।।

यक्षस्वरूपाय जटाधराय
पिनाकहस्ताय सनातनाय।
दिव्याय देवाय दिगम्बराय
तस्मै 'य'काराय नमः शिवाय।

इस सदाशिव-वंदना की फलश्रुति है-

पञ्चाक्षरमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसंनिधौ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते।।

सदाशिव की वंदना में उनके स्वरूप की झाँकी मिल जाती है। तो ऐसे है सदाशिव, जिनकी महिमा का गान करना किसी अत्युच्च साधक के लिए ही संभव है।

आदि शंकराचार्य सदाशिव के इस रूप का वर्णन करते हुए अन्य स्तोत्र में कहते हैं-

महेशं सुरेशं सुरारार्तिनाशं
विभुं विश्वनाथं विभूत्यङ्गभूषम्।
विरूपाक्षमिन्द्वर्कवह्नित्रिनेत्रं
सदानन्दमीडे प्रभुं पञ्चवक्त्रम्।।

अर्थात् ''मैं पंचमुख शिव की आराधना करता हूँ, जो देवाधिदेव हैं, पालनकर्त्ता हैं, देवों के कष्ट-निवारक हैं, जिनके शरीर का आभूषण भस्म है, जिनके त्रिनेत्र हैं, जो सूर्य, चन्द्रमा तथा अग्नि हैं।'

शिव के ये पंचमुख हैं- सद्योजात, वामदेव, तत्पुरुष, ईशान व अघोर। यही पाँच अवतार इनके पांच मुखों के रूप में (चारों दिशाओं एवं एक मध्य मुख में) प्रदर्शित होते हैं।

राव, टी. ए. जी. इन पंचरूप तत्पुरुष, अघोर, वामदेव, सद्योजात और ईशान को पंचब्रह्म मानते हैं जो निष्काम शिव परब्रह्म से उत्पन्न होते हैं। (लीमेन्ट्स आफॅ हिन्दू आइक्नोग्राफी'2, पृ. 375)

किन्तु शैवमत में ये पंचमुख आत्मा, नश्वर से सार बुद्धि, अंधकार तथा मस्तिक हैं। (अग्रवाल बी.एस. 'शिव महादेव' पृ. 1820)

'विष्णुधर्मोत्तर पुराण' के अनुसार उनके पाँच मुख सद्योजात वामदेव, अघोर, तत्पुष और ईशान हैं-

सद्योजातं वामदेवमघोरं च महाभुजम्।
तथा तत्पुरुषक्षेमीशानं पंचमं मुखम्।।

(विष्णुधर्मोत्तर, पुराण 3/48/1)

ये पाँच मुख पाँच महाभूतों के सूचक एवं दस भुजाएँ दस दिशाओं की सूचक बताई गयी हैं एवं हाथों में प्रयुक्त आयुध या अस्त्र-शस्त्र जगद्-रक्षक शक्तियों के सूचक हैं, अक्षमाला, कालचक्र की द्योतिका है अर्थात् शिव के हाथों में काल और उसका परिणाम है। आचार्य हजारी

प्रसाद द्विवेदी ने अपने उपन्यास में उज्जैन स्थित महाकाल शिव को इसी रूप में चित्रित किया है। उन्होंने 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में उज्जैन के महाकालेश्वर को सदाशिव मानते हुए सृष्टि का कारक, अखिल ब्रह्माण्ड का नियामक-नियंत्रक माना है। इसकी पुष्टि संस्कृत वाङ्मय के आदिम ग्रंथों से होती है।

पंचमुखी सदाशिव के पाँचों मुखों का रूपकत्व इस प्रकार समझना चाहिए-

सद्योजातं मही प्रोक्ता वामदेवं तथा जलम्।
तेजस्तु घोरं विख्यातं चायुस्तत्पुरुषो मतम्।
ईशानं च तथाकाशमूर्ध्वस्थं पञ्चमं मुखम्।।

(विष्णुधर्मोत्तर पुराण 3-48-3-3)

सद्योजात जिसका मुख पश्चिम की ओर है, उसका मोती के समान पूर्णचन्द्र के समान रूप है और पृथ्वी का द्योतक है। अघोर दक्षिणोन्मुख है, गहरे नीले रंग के हैं तथा अग्नि के द्योतक हैं। तत्पुरुष पूर्व की ओर है, रंग सुनहला पीला है तथा वायु को प्रदर्शित करते हैं। ईशान का मुख ऊपर की ओर है। रंग धुंधला श्वेत है तथा आकाश का द्योतक है। यह समस्त अलग-अलग उत्तरी महादेव, दक्षिणी भैरव,, पश्चिमी नन्दी, पूर्वी उमा और सदाशिव का ईशान पाँचवा मुख उपरवाला है। 'अपराजितपृच्छा' में भी शिव के इन पाँचों रूपों (पंचमुखों) का वर्णन मिलता है कि शिव 'ग्यारह रुद्र में से एक हैं तथा 'रूपमण्डन' में शिव को बारह रुद्रों में से एक माना है। (हनुमान द्वाश रुद्र हैं।) बाद में यह माना जाने लगा कि सद्योजात को जटामुकुट में दिखाया जाना चाहिए तथा उनका हाथ अभय तथा वरद मुद्रा में होना चाहिए। वामदेव को लाल वस्त्र, लाल ही जनेऊ, लाल माला, लाल ही उष्णीश और तलवार तथा ढाल दो हाथों में होना चाहिए। अघोर की आकृत्ति भयंकर होती है तथा उन्हें अपने बालों में कान-गले में सर्प पहनना चाहिए। तत्पुरुष को पीला वस्त्र पहनना चाहिए, पीली ही जनेऊ तथा दोनों हाथों में पुष्प तथा महानिम्बू होना चाहिए। ईशान का रंग श्वेत तथा हाथों में त्रिशूल और कपाल लेना चाहिए। केवल 'रूपमण्डन' में अघोर को आठ हाथों का बताया गया है किन्तु अन्य ग्रंथों में उन्हें दो हाथों वाला ही माना गया है। केवल वामदेव के दो चक्षु हैं तथा अन्यों के तीन चक्षु हैं जो क्रमशः सूर्यः चन्द्र तथा अग्नि के घोतक हैं।

स्पष्ट हो जाता है कि पंचमुख-शिव की अलग-अलग रूपाकृतियाँ हैं। यह नहीं समझना चाहिए कि एक काया में पाँच मुख हैं, जैसा कि ब्रह्मदेव चतुर्मुख हैं। कैमूर पहाड़ियों में (बिहार के भभुआ के निकट) मुण्डेश्वरी मंदिर में चतुर्मुखी महादेव प्रतिष्ठित हैं, जिसका वर्णन महावीर मंदिर न्यास के अध्यक्ष किशोर कुणाल साहब ने विस्तार से 'मुण्डेश्वरी मंदिर ग्रंथ में किया है जो महावीर मंदिर प्रकाशन द्वारा प्रकाशित हुआ है। यह ग्रंथ बिहार शताब्दी समारोह के अवसर पर किया गया है।

'लिंग पुराण' के अनुसार शिव के इन पाँचों मुखों में ईशान मुख भोग्य, प्रकृति वर्ग के भोक्ता, क्षेत्र रूप शक्ति का, प्रकृति शक्ति की सूचक हैं। अघोर नामक मुख बुद्धि शक्ति का निदान है। वामदेव नामक मुख सर्वज्ञ व्याप्त सर्वज्ञ महादेव का सुंदर चित्रण, अंहकार शक्ति का द्योतक है एवं सद्योजात शरीर में विद्यमान मनःशक्ति का सूचक है। इस पुराण में 'शिवपुराण' के अनुसार पाँचों मुख क्रमशः केन्द्र में सर्वोपरि, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर व पूर्व दिशाओं में रहते हैं।

'वायु पुराण' के अनुसार- ''वे पूर्वमुख से इन्द्र रूप में प्रकाश करते हैं, दक्षिण मुख से लोकों का संशय करते हैं। पश्चिम मुख से वरुण तत्त्व प्राप्त करते हैं और उत्तर मुख से सौम्यत्व प्राप्त करते हैं।'' 'शिवपुराण' (रुद्रसंहिता, सृष्टिखंड) के अनुसार- 'वे कर्पूर के समान सुंदर वर्णवाले, पाँच मुख, दस भुजाओं तथा अनेक आभूषणों से युक्त रहते हैं। प्रत्येक मुख में तीन-तीन नेत्र रहते हैं। मस्तक पर आकाश गंगा को धारण करते हैं तथा भाव में चन्द्रमा शोभायमान रहता है। उनके अंगों की शोभा कर्पूर के समान श्वेत गौर वर्णन की है तथा वे अपने सारे अंगों में भस्म लगाए रहते हैं।''

उनका 'पिनाक' धनुष वह्नि का सूचक तथा बाण पंचतन्मात्राओं का सूचक है। टंक आग्नेय ताप का सूचक, शूल वातव्य ताप का सूचक, वज्र ऐन्द्र ताप का घोतक, पारा वरुण ताप का सूचक, घंटे स्वरात्मक वाक् शक्ति के द्योतक हैं।

भगवान् सदाशिव के चित्रण में शाम्भव दर्शन की ज्योति के महाप्रकाश का आभास मिलता है। सदाशिव के परादिशक्तिपंचक से सभी आधिभौतिक, अधिदैविक एवं आध्यात्मिक कार्य-कलापों की सृष्टि हुई है। सदाशिव शिव की शांत मुद्रा है। सदाशिव की पूजा बंगाल में विशेष प्रचलित है। बंगाल के सेनवंशी राजा सदाशिव के भक्त कहे जाते हैं। हिमाचल प्रदेश के मण्डी क्षेत्र के राजा ईश्वरी सेन भी सदाशिव के भक्त थे। भगवान् सदाशिव अनंत, अखंड अनादि सत्ता हैं। भारतीय चित्रकारों ने सदाशिव के अनेक चित्र बनाए हैं जिनमें राष्ट्रीय संग्रहालय नई दिल्ली में सरक्षित न. 60,1560 मण्डी शैली, विक्टोरिया जुबिली संग्रहालय विजयवाड़ा में सुरक्षित न. 316 दक्कन शैली, राजकीय संग्रहालय चण्डीगढ़ में सुरक्षित न. 3782 पहाड़ी शैली, राजकीय संग्रहालय चण्डीगढ़ की पहाड़ी शैली का चित्र, म्यूनिसिपल संग्रहालय, इलाहाबाद नं. 243 और नं. 580 कांगड़ा शैली का, जयपुर के रामगोपाल विजय वर्गीय के निजी संकलन का जम्मू शैली का, भारत कला भवन वाराणसी नं. 4529 मण्डी शैली, विक्टोरिया एवं एलबर्ट संग्रहालय, लन्दन का न. आई.एस. 238-195 मण्डी शैली का चित्र, अत्यंत उत्कृष्ट हैं।

भारत कला भवन, वाराणसी में सुरक्षित नं. 3742 का चित्र 'सदाशिव एवं पार्वती' पहाड़ी शैली का, अत्यंत उत्कृष्ट है। इस चित्र में पंचमुख शिव को हस्तिचर्म पर पलौथी मारे बैठे दिखाया गया है। उनके दाहिने पाँच हाथों में क्रमशः रुद्राक्ष की माला, प्याला, तीर, वरदहस्त एवं तलवार है। बायें हाथों में क्रमशः नीचे से धनुष, त्रिशूल, डमरू तथा फरसा है। भुजाओं में सर्पाभूषण है तथा गले में सर्प एवं मुण्डमाल है। शरीर पर सिंहचर्म धारण किया हुआ है। पाँचों जटामुकुट में सर्प सुशोभित हैं। त्रिनेत्र तथा बड़ी-बड़ी आँखें पहाड़ी काल के बसौहली शैली का प्रतिपादन करते हैं। बाँयीं ओर पार्वती हाथ जोड़े शिव के इस स्वरूप के सम्मुख नतमस्तक हैं। नीचे नन्दी पूर्णतः सुसज्जित बैठे हैं। शिव के सम्मुख है। यह चित्र अत्यंत सशक्त है।

अनादि अनंत सदाशिव के श्रीचरणों में कोटिशः प्रणति। वे लोक मंगल करें, सांसारिकता के कराल- जाल में फँसे प्राणियों का उद्धार करें। काशी में भगवान विश्वनाथ आसन्न मृतक के कानों में राममंत्र फूँककर मुक्ति प्रदान करते हैं, इन पंक्तियों के लेखक को भी सपरिवार मुक्ति-लाभ कराएँ, सांसारिकता से मुक्त कर श्रीचरणों की भक्ति प्रदान कर जीवन को सफल करें।

इसी विनती के साथ!

❖

पौराणिक कथा-

गंगा-शन्तनु का मिलन और ''भीष्म'' की उत्पत्ति

❑ डॉ० जयनन्दन पाण्डेय
राष्ट्रपति पदक प्राप्त
सेवा-निवृत अध्यापक, राजगीर

हस्तिनापुर नरेश शन्तनु अपने राज्य का संचालन कुशलता पूर्वक कर रहे थे। उनकी शासन व्यवस्था में हस्तिनापुर की प्रजा सुख-शान्ति पूर्वक रह रही थी। राजा शन्तनु का वनों में जा कर शिकार करना एक विशेष प्रकार का स्वभाव-सा बन गया था। नित्य जंगल जाकर व्याघ्रादि पशुओं को मारते हुए मृगया वृत्ति में राजा तत्पर रहा करते थे।

एक दिन गंगा के किनारे घने जंगल में विचरण करते हुए राजा शन्तनु ने एक परम सुन्दरी स्त्री को देखा। वह स्त्री मृगों जैसी आँखों वाली तथा दिव्याभूषणों से समलंकृत थी। उसे देखकर उसपर आसक्त होते हुए राजा ने मन में विचार किया कि साक्षात् लक्ष्मी के समान रूप-यौवन-सम्पन्न यह स्त्री वही प्रतीत होती है है, जिसके वारे में मेरे पूज्य पिताजी ने मुझे पहले बतलाया था।

उसके मुख कमल का जान करते हुए राजा तृप्त नहीं हुए। उस स्त्री में उनका मन बार-बार आकर्षित होने लगा। राजा शन्तनु का चिन्त उसमें रम गया। वह स्त्री भी उसे ''महाभिष'' समझती हुई उसके प्रति प्रेमासक्त हो गई।

(ध्यातव्य- ''महामिष'' अपने पूर्व जन्म में एक सत्यवादी, धर्मात्मा तथा चक्रवर्ती राजा थे, जो अपने पुण्य-प्रभाव से एक बार ब्रह्मा की सभा में देवलोक गए हुए थे, जहाँ उनकी नजर ''गंगा''पर पड़ी परस्पर वासनात्मक दृष्टि से वे एक दूसरे को देख रहे थे। उन दोनों के ऐसे पारस्परिक विचार से ब्रह्मा ने नाराज होकर शाप देते हुए कहा कि तुम दोनों ने ब्रह्मलोक की मर्यादा का हनन किया है, इसलिए तुम दोनों को अपनी कामना की पूर्ति के लिए मर्त्यलोक में जाना होगा। ''वृथा ने होय देव-ऋषि वाणी।'' वही राजा महामिष दूसरे जन्म में ब्रह्मा के शापवश राजा शन्तनु के रूप में महाराज प्रतीप के पुत्र बने हैं। शापवश दोनों की भेंट शन्तनु एवं गंगा के रूप में धरती पर होती है)

प्रेमासक्त गंगा मन्द-मन्द मुस्काती हुई राजा शन्तनु के समीप आकर खड़ी हो गई। राजा ने उस स्त्री से कहा- हे सुमुखी! तुम कोई देवी, गन्धर्वी, यक्षी, नागकन्या अथवा कोई अप्सरा तो नहीं हो? तुम कोई भी हो, प्रिये! तुम मेरी भार्या बन जाओ। तुम्हारी मुस्कुराहट देखकर मैं अतिशय कामासक्त हूँ। अतः तुम मेरी अर्धाङ्गनी बनना स्वीकार करो।

राजा शन्तनु तो निश्चित रूप से नहीं जाना सके कि यह वही गंगा है किन्तु गंगा ने उन्हें पहचान लिया कि ये राजा ''महामिष'' ही हैं, जो ब्रह्मा के शाप से शन्तनु के रूप में पृथ्वी पर उत्पन्न हुए हैं। पूर्व जन्म के प्रेमवश में प्रेमासक्त देखकर राजा शन्तनु से मुस्काती हुई गंगा ने कहा- हे राजन! मैं यह अच्छी तरह जानती हूँ कि आप महाराज प्रतीप के पुत्र हैं और आप- जैसे पुरुष द्वारा बार-बार निवेदन

किये जाने पर भला वह कौन स्त्री होगी जो आपसे विमुख रहेगी। मेरा तो परम सौभाग्य है कि आप मुझे अपनी भार्या और हस्तिनापुर की महारानी बनाना चाहते हैं। लगता है कि आपका मेरे प्रति ऐसा भाव का होना ईश्वर की विशेष कृपा से ही है।

हे राजेन्द्र! आपकी मैं अर्धाङ्गनी बनूँ इसके पूर्व मैं आपको वचनबद्ध करना चाहती हूँ। मैं आपकी रानी तभी बन सकती हूँ जब आप मेरी शर्त्तों को पूरा कर सकेंगें। हे नृपश्रेष्ठ। मैं भला-बुरा जो भी करूँ, आप इसमें हस्तक्षेप नहीं करेंगें। मेरे द्वारा किये गए कार्यों में आप रोक नहीं लगायेंगे। जिस समय मेरा वचन आप नहीं मानेंगे, उसी समय मैं आपको त्याग कर कहीं दूर चली जाऊँगी। गंगा की शर्त को सुनकर कामासक्त राजा ने उसे ''तथास्तु'' कह दिया।

इस प्रकार मानवी रूप धारण करने वाली रूपवती एवं सुन्दरी गंगा महाराज शन्तनु की पत्नी बनकर राजभवन पहुँच गई। राजा भी वैसी सुन्दरी पत्नी पाकर बड़े आनन्द एवं हर्षोल्लास के साथ राज-काज देखने लगे।

राजा शन्तनु और गंगा दोनों ही बड़े आमोद-प्रमोद के साथ सुखमय जीवन जीने लगे। परस्पर आहार-विहार करते हुए दोनों के अनेक वर्ष बीत गए, लेकिन उन दोनों को समय बीतने का कोई बोध नहीं हुआ। राजा शन्तनु गंगा के साथ अपने भवन में लक्ष्मी-नारायण की तरह विहार करने लगे।

इस प्रकार कुछ समय बीतने पर महारानी गंगा ने गर्भ धारण किया। गंगा को वसिष्ठ द्वारा शापित उन अष्टवसुओं की प्रार्थना भी स्मरण में थी। यहाँ स्मरण करा दूँ कि 'वसुओं' ने उनसे प्रार्थना की थी कि हे गंगे! धरती पर हम सब आपके गर्भ से उत्पन्न हों और आप हम सबों की माता बनें। केवल प्रार्थना यह है कि जब हमसब आपके गर्भ से जन्म लें तो जन्म लेने के तुरन्त बाद आप हमसबों को जल में प्रवाहित कर दें। इससे हम सब वसिष्ठ के प्रदत्त शाप से मुक्त हो जाएंगे और पृथ्वी (मर्त्यलोक) का कष्ट भी अधिक नहीं भोग सकेंगे। तदनुसार गंगा ने नौ महीनों के बाद एक वसु को पुत्र के रूप में जन्म दिया। उन्होंने उस बालक को जन्म लेते ही तत्काल जल में प्रवाहित कर दिया। इस प्रकार दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवे, छठे एवं सातवें पुत्र के मारे जाने के बाद राजा शन्तनु को बड़ी चिन्ता हुई।

महारानी ने आठवें गर्भ को जब धारण किया तब समस्त हस्तिनापुर में लोक निन्दा होने लगी। यह कैसी रानी है, जो अपने पुत्रों को स्वयं मार देती है और ये कैसे राजा हैं जो रानी के द्वारा किये गये इस सुन-समझकर भी मौन रह जाते हैं। इस लोक-निन्दा की सूचना महाराज शन्तनु को दी गयी।

राजा शन्तनु ने सोचा- अब मैं क्या करूँ? मेरा वंश इस पृथ्वी पर सुस्थिर कैसे होगा? वंश की रक्षा के लिए मुझे कोई दूसरा यत्न करना ही होगा। कुछ दिन के बाद जब गंगा के आठवें गर्भ से ''द्यौः'' नामक वसु ने पुत्र के रूप जन्म लिया, जिसने अपनी पत्नी के कथनानुसार वसिष्ठ की नन्दिनी नामक गाय का अपहरण कर लिया था और जिसे वसिष्ठ ने शाप दे दिया था- (पूर्वजन्म की कथा)। उसे देखकर राजा शन्तनु ने गंगा से करबद्ध प्रार्थना की। हे प्रिये! मैं तुम्हारा दास हूँ। मेरी प्रार्थना है कि इस पुत्र को मुझे दे दो। मैं इसे पालना चाहता हूँ, अतः इसे जीवित रहने दो और मुझे दे दो। तुमने मेरे सात पुत्रों

को मार डाला, मैंने कुछ नहीं कहा। परन्तु मेरे इस आठवें पुत्र को मत मारो। हे रूपवती! इस पुत्र के बदले में मुझसे तुम जो भी माँगोगी उस दुर्लभ से दुर्लभ वस्तु को मैं तुम्हें दूँगा। वेद-शास्त्रों में भी पुत्रहीन की गति नहीं होने की बात कही गई है। इसलिए तुम से मेरी याचना है कि इसे आठवें पुत्र को मुझे दे दो।

ऐसी विनम्रता भरी याचना सुनने के बाद भी जब गंगा उसे पुत्र को लेकर जाने लगी तब राजा शन्तनु ने कुपित एवं दुःखित होकर गंगा से कहा- हे पापिनी! तुम नरक से भी नहीं डरती, तुम कौन हो? लगता है तुम किसी पापाचारिणी की पुत्री हो तभी तो ऐसे कुकर्म करने से भय नहीं खाती हो। अब तुम मेरी पत्नी के लायक नहीं हो। तुम्हें जहाँ जाना हो, जाओ, लेकिन अब यह मेरा पुत्र यहीं मेरे पास रहेगा। राजा के ऐसा कहने पर उस नवजात शिशु को लेकर जाती हुई गंगा ने क्रोधपूर्वक उनसे कहा- राजन्! आप अपने शर्त का स्मरण करें। आपने मुझे वचन दिया था कि मैं अपनी मर्जी से जो कुछ करूँगी, उसमें आप हस्तक्षेप नहीं करेंगे। और आप अगर हस्तक्षेप करेंगे तब मैं आपकी पत्नी नहीं रहूँगी और मैं वापस चली जाऊँगी। हे राजन्! आप मुझे गंगा जानिए। देवताओं का कार्य करने के लिए मैं यहाँ आयी थी। जिन सात पुत्रों को मैंने जल में प्रवाहित किया है और यह आठवाँ, जो इस समय मेरी गोद में है, ये अष्टमवसु हें जिन्हें महर्षि वसष्ठि ने प्राचीन काल में शाप दिया था। इन अष्टवसुओं ने मुझसे माता बनने की प्रार्थना की थी। आप ऐसा समझ लीजिए कि देवताओं की कार्यसिद्धि के लिए ही मैंने जन्म लिया था।

ये सात वसुएँ तो मेरे गर्भ से जन्म लेकर शाप से विमुक्त हो गए हैं। यह आठवाँ वसु अब कुछ समय तक आपके पास पुत्र के रूप में रहेगा। परन्तु अभी यह नवजात शिशु है, इसका लालन-पालन सम्प्रति आपके द्वारा संभव नहीं है। इस शिशु को अभी माँ की आवश्यकता है, माँ के दूध और आँचल की आवश्यकता है इसलिए इसे अभी मेरे पास रहने दीजिए। जब यह मुझसे अलग रहने लायक हो जायगा तब मैं पुनः आपको इसे लौटा दूंगी।'' ऐसा कहकर उस बालक के साथ अन्तर्ध्यान हो गई। उस दिन से राजा बड़े ही दुःखी और उदास मन से राजा भवन में रहने लगे।

कुछ समय बीतने पर महाराज शन्तनु आखेट के लिए जंगल गए। शिकार करते-करते जब राजा गंगा तट पर आए तो उन्होंने देखा कि गंगा के प्रवाह में बहुत ही कमी हो गई है तथा नदी में जल भी बहुत ही कम है। राजा विस्मय एवं आश्चर्य में पड़ गए। उन्होंने समीप में ही एक बालक को देखा जो धनुष एवं बाण से सुसज्जित था। बालक निरन्तर अपने बाणों के प्रहार से गंगा की धारा को रोकने का प्रयास कर रहा था। उसकी बहादुरी एवं उसके बाणों की तेज और शक्ति को देखकर राजा शन्तनु बड़े ही विस्मित हुए।

उस बालक का सौन्दर्य, शरीर-सौष्ठव, एवं धनुषवाण कला में हस्तलाघव देखकर राजा ने उस बालक से पूछा- हे बालक! तुम कौन हो? तुम किनके पुत्र हो? किन्तु उस बालक ने कुछ भी उत्तर नहीं दिया और कुछ पल बाद वह अन्तर्धान हो गया। उस बालक की सर्वगुणसम्पन्नता देखकर राजा चिन्तित मन से सोंचने लगे कि कहीं यह मेरा ही पुत्र तो नहीं है? अब मैं क्या करूँ और कहाँ जाऊँ?

जब वहीं उन्होंने खड़े होकर समाहित

चित्त से गंगाजी की स्तुति की, तब गंगाजी ने प्रसन्न होकर दर्शन दिया। गंगा से राजा शन्तनु ने कहा- हे गंगे! वह बालक कौन था? कृपया उसे मुझको दिखला दीजिए। राजा की बात सुनकर गंगा ने कहा- हे राजन्! वह आपका ही पुत्र आठवाँ वसु है, जिसे मैंने पाल-पोस कर बड़ा किया है। आपके इस पुत्र गांगेय को मैं पुनः आपको सौंपती हूँ। हे राजेन्द्र! यह आपका पुत्र बड़ा बलवान है और आपके वंश की कीर्ति को ख्यापित करनेवाला है। यह वेद-शास्त्रों का ज्ञाता और धनुर्विद्या में निपुण है। आपका यह पुत्र महर्षि वसिष्ठ के आश्रम में पला और बढ़ा है। यह सभी विद्याओं में पारंगत, कार्य-कुशल तथा सदाचारी है। जिस विद्या को जमदग्नि पुत्र परशुरामजी जानते हैं, उसे आपका यह पुत्र भी जानता है। आप इसे ग्रहण करें और इसके साथ सुखपूर्वक अपना जीवन बिताएँ।

ऐसे योग्य पुत्र को पाकर राजा शन्तनु बहुत ही आनन्दित हुए। उन्होंने अपने पुत्र का आलिंगन किया तथा रथ पर बिठाकर हस्तिनापुर लौट गए।

हस्तिनापुर पहुँच राजा ने एक बहुत बड़ा उत्सव किया तथा दैवज्ञ (ज्योतिषाचार्य) को ''युवराज्याभिषेक'' किया। इनका नाम देवव्रत रखा गया जो आगे चलकर अपनी कठिन प्रतिज्ञा के कारण 'भीष्म' नाम से ख्यापित हुए। राजा शन्तनु अपने सर्वगुण सम्पन्न धर्मात्मा पुत्र को युवराज बनाकर सुखपूर्वक रहने लगे।

जो मनुष्य गंगावतरण तथा वसुओं के उद्भव की इस पवित्र कथा को सुनता है वह अपने सभी सांसारिक पापों से मुक्त हो जाता है, इसमें कोई संशय नहीं।

उपर्युक्त पुण्यदायक तथा वेद सम्मत पौराणिक आख्यान को महर्षि वेदव्यास जी ने अपने प्रिय शिष्य श्री सूतजी को सुनाई थी। यह कल्याणकारी कथा सुखदायक तथा पुण्यप्रद है। इस ऐतिहासिक तथा पौराणिक कथा को सुननेवाले, सुनानेवाले तथा वर्तमान समय में लिपिबद्ध करने वाले, सबों को सुखानुभूति कराती है।

❖

सेवा-निवृत अध्यापक,
राजगीर, नालंदा

अभिवादन के लिए 'राम! राम!'

अनेक विदेशी यात्रियों ने भारत में यात्रा के क्रम में यह देखा है कि जब लोग आपस में मिलते हैं तो अभिवादन के लिए राम राम शब्द का उच्चारण करते हैं। यह वृत्तान्त सबसे पहले रॉल्फ फिच (1582-1591) ने लिखा है कि आगरा में उन्हें ऐसे लोग मिले हैं, जो परस्पर अभिवादन के लिए राम का नाम लेते हैं। यह श्रीराम के प्रति लोक-आस्था का परिणाम है।

कलियुग का काल

❑ डॉ० उषा रानी

[राजा परीक्षित ने तो कलियुग को पृथ्वी पर से भगा दिया था। पर कलियुग के गिड़गिड़ाने पर मधपान, पर स्त्री-गमन, झूठ तथा हिंसा- इन चार स्थानों पर रहने देने की दया की। फिर भी कलियुग सन्तुष्ट नहीं हुआ तो उसके लिए स्वण-यानी अधिक धन के साथ रहने की स्वीकृति दी। प्रस्तुत है कलियुग के अवतरण की यह बोध कथा।]

महाभारत में कलियुग के आगमन को लेकर बड़ा ही रोचक विवरण मिलता है। पांडवों के स्वर्गारोहण के उपरान्त राजा परीक्षित ने दिग्विजय हेतु तीन अश्वमेघ यज्ञ किये, उसी समय धर्म बैल का रूप धारण कर गो रूपिणी पृथ्वी से मिला। गौ के नेत्रों से आँसू बह रहे थे और वह श्रीहीन थी। धर्म रूपी बैल ने गो रूपी पृथ्वी से पूछा कि देवी तुम्हें किस बात की चिन्ता है, उसपर पृथ्वी बोली- हे धर्म! तुम सर्वज्ञ होकर भी मुझसे दुःख का कारण पूछते हो। सत्य, पवित्रता, क्षमा, दया, संतोष, त्याग, दान, ज्ञान, वैराग्य, शौर्य, तेज, ऐश्वर्य, साहस, विनय, सौभाग्य कीर्ति आदि गुणों से युक्त भगवान् श्रीकृष्ण के स्वधामगमन के साथ ही कलियुग का पदार्पण हुआ है, जो मेरे और तुम्हारे साथ ही देव, ऋषि, साधु, संन्यासी सभी के लिये महान् शोक है। अब मेरा सौभाग्य समाप्त हो गया है।

जब धर्म और पृथ्वी ये वार्त्ता कर रहे थे, उसी समय मुकुटधारी कलियुग वहाँ आया और उनदोनों को प्रताड़ित करने लगा। उसी समय राजा परीक्षित भी अपने दिग्विजय के क्रम में वहाँ से गुजरे और उन्होंने एक मुकुटधारी व्यक्ति को डंडा लेकर एक बैल और गाय को पीटते देखा। वह बैल अत्यंत सुन्दर था पर उसके तीन पैर टूटे हुए थे। गाय भी कामधेनु सदृश सुन्दर थी, पर दोनों ही भयभीत होकर काँप रहे थे।

महाराजा परीक्षित ने अपने धनुषबाण के साथ पीटनेवाले को ललकारा- अरे दुष्ट! पापी, तू कौन है? इस निरीह गाय और बैल को क्यों सता रहा है? तेरे इस अपराध का उचित दंड तो तेरा बध ही है। राजा परीक्षित के भय से कलियुग रूपी मुकुटधारी व्यक्ति भयभीत हो गया और वही चुपचाप खड़ा हो गया। तब महाराजा परीक्षित ने उन दोनों से पूछा- हे बैल! तुम्हारी तीन पैर कैसे टूट गये हैं? तुम बैल ही हो या अन्य कुछ? हे गोमाता! तुम भय मुक्त हो जाओ, क्योंकि मैं अभी इस दुष्ट को दण्ड देता हूँ। तब बैल ने जवाब दिया- हे महाराज! आपने परम ऐश्वर्यवान् पाण्डवों के कुल में जन्म लिया है, अतः ये वचन सर्वथा आपके ही योग्य हैं। हे राजन्! हम यह नहीं जानते कि इस संसार में प्राणियों को कौन दुःख देता है, कौन पीड़ा पहुँचाता है? शास्त्रों में भी इसकी अलग-अलग व्याख्या की गई है। कहीं तो दुःख का कारण अपने आप को ही स्वीकार किया गया है, तो कोई भाग्य को दुःख कारण मानता है और कोई कर्म को ही दुःख का निमित्त मानते हैं। कुछ स्वभाव को, तो कुछ ईश्वर को ही दुःख का कारण मानते हैं।

अतः, हे राजन्! अब आप ही निश्चित कीजिये कि मेरे दुःख का कारण कौन है? राजा परीक्षित को इन वचनों से ज्ञात हो गया कि वह बैल के रूप में साक्षात् 'धर्म' ही हैं और गौ रूप धारिणी 'पृथ्वी माता'।

अतः उन्होंने विचार करके कहा- 'हे धर्म स्वरूप वृषभ! आप धर्म के मर्म को भलीभाँति जानते हैं, आप किसी की चुगली नहीं कर सकते इसीलिये आप दुःख देनेवाले का नाम नहीं बता रहे हैं। हे धर्म! सत्ययुग में आपके तप, पवित्रता, दया और सत्य चार चरण थे। त्रेता युग में तीन चरण रह गये। द्वापर में दो ही रहे और अब यह दुष्ट कलियुग के

कारण आपका एक ही चरण रह गया है, जिसे, नष्ट करने का प्रयत्न यह कलियुग कर रहा है।'' इतना कहकर राजा परीक्षित ने उस पापी राजवेशधारी कलियुग को मारने के लिए अपनी तलवार निकाली, इस पर कलियुग भयभीत होकर राजा परीक्षित के चरणों में गिर गया और 'त्राहि माम्' करने लगा। राजा परीक्षित ने शरण में आये हुए कलियुग को मारना उचित नहीं समझा और उसे कहा- हे कलियुग! तू मेरी शरण में आ गये हो, किन्तु अपराध, पाप, झूठ, चोरी, कपट आदि उपद्रवों के मूल कारण केवल तुम ही हो। अतः तुम मेरे राज्य से तुरंत निकल जाओ और लौटकर फिर कभी मत आना।

राजा परीक्षित के इन वचनों को सुनकर कलियुग ने कातर वाणी से कहा- हे राजन! आपका राज्य तो संपूर्ण पृथ्वी पर है। आपके राज्य से बाहर ऐसा कोई स्थान नहीं है, जहाँ मैं रह सकूँ। आपने मुझे शरण दी है, अतः दया करक मेरे निवास का कुछ न कुछ प्रबंध कर दें।'' कलियुग ने इस तरह कहने पर राजा परीक्षित सोंच में पड़ गये और फिर उन्होंने कहा- ''मद्यपान, परस्त्रीगमन और झूठ तथा हिंसा इन चार स्थानों में निवास करने की मैं तुम्हें छूट देता हूँ।'' इसपर कलियुग ने अनुनय किया कि ये चार स्थान मेरे लिये अपर्याप्त है, दया कर और भी स्थान मुझे प्रदान करने की कृपा करें। तब कलियुग की याचना पर विचार करते हुए उसे पाँचवाँ स्थान स्वर्ण दे दिया।

इन स्थानों की प्राप्ति से कलियुग प्रत्यक्षतः तो वहाँ से चला गया पर अदृश्य रूप में राजा परीक्षित के स्वर्णमुकुट में ही निवास करने लगा तथा इस प्रकार कलियुग का इस धराधाम पर आगमन हुआ।

❖

बोध कथा

कर्म का फल

पुण्यस्य फलमिच्छन्ति पुण्यं नेच्छन्ति मानवाः।
न पापफलमिच्छन्ति पापं कुर्वन्ति यत्नतः।।

यह संसार बड़ा विवित्र है, और विचित्र है मानव का जीवन भी। सचमुच, मनुष्य करता कुछ है और चाहता कुछ है। प्रायः यह आमफहम बात है कि मनुष्य मन में ऊँची-ऊँची उड़ानें पाल रखता है, लेकिन, उसे प्राप्त करने की दिशा में कभी कोई कारगर कदम नहीं उठाता। बात साफ है ,मनुष्य पुण्य का फल चाहता है, लेकिन पुण्य करना नहीं चाहता। ठीक इसके विपरीत, वह दिन-रात बुरे कर्मो में लिप्त रहता है, कोई असावधानी में नहीं, जान-बूझकर एक से बढ़कर एक बुरे कामों को अंजाम देता है, लेकिन अफसोस, उस बुरे कर्म का कुफल वह भोगना नहीं चाहता।

यह बात अन्य प्राणियों के सम्बन्ध में नहीं कही जा सकती, क्योंकि वह नासमझ है। क्या उचित है, क्या अनुचित इसका उसे ज्ञान नहीं है। पर यह भी नहीं कहा जा सकता कि वह बिल्कुल ज्ञान शून्य है। अगर ऐसी बात होती तो वह अपने आहार की ओर अत्यन्त बेसब्री से नहीं दौड़ता, खाना नहीं झपटता। पशु को केवल अपने पेट भरने तक से ही मतलब है, और कोई हिसाब-किताब नहीं। अगर हम भी ऐसे हैं, तो हम भी पशु हैं।

❖

अब लौं नसानी अब ना नसैहौं

पं. सुरेशचन्द्र मिश्र

जीवन की राह कब और कैसे किधर मुड़ जाएगी, इसका दूर-दूर तक किसी को अता-पता नहीं और यह भी सच है कि कभी-कभी एक महज छोटी-सी घटना भी हममें महान् परिवर्तन की कहानी गढ़ जाती है, नई सूझ-बूझ की चमक दे जाती है।

आज महावैज्ञानिक न्यूटन को कौन नहीं जानता? प्रायः हम सब ने वृक्ष से गिरते फलों को अवश्य देखा होगा; परन्तु कितनों ने उसे उस रूप में पहचाना, जिस रूप में न्यूटन ने। कभी-कभी व्यक्ति से घटना की पहचान बनती है, तो कभी-कभी घटना से व्यक्ति की। इसे हम और अच्छी तरह समझें। आप भगवान् राम की असंख्य कीर्तियों से परिचित हैं। उसीमें एक कहानी अहल्या की है, जिसे भगवान् राम ने अपने चरण से स्पर्श कर अधम पाहन से पवित्र नारी बना दिया। यहाँ व्यक्ति से घटना प्रधान हो गई। वहीं दूसरी ओर रावण के वध से राम की कीर्ति चारो ओर फैल गई। आइए, इसी सोच के परिप्रेक्ष्य में मैं आप सब को एक छोटी कहानी सुनाता हूँ, जिसकी कथावस्तु छोटी होती हुई भी अपने आप में बहुत कुछ कहने की काबिलियत रखती है।

आज मैं अपनी बात आप सब के आगे रखता हूँ। रंजन बाबू बड़े ही मसहूर इंजिनियर थे। पटना के सभ्यों में उनकी अच्छी खासी गिनती थी। जहाँ भी रहते, चारों ओर उनके प्रशंसकों की भीड़ लगी रहती। अर्दली उनके घर-बाहर के सारे कामों को देखता। वे ऑफिस से घर लौट अपने बच्चों को पढ़ाते-लिखाते और बचा-खुचा समय अपने प्यारे कुत्ते टॉमी को घुमाने, दुलारने, चुचकारने-पुचकारने में लगाते।

टॉमी, मालिक का बड़ा अदबगार था। रंजन बाबू का लड़का टीपू अगर उनके कंधे पर बैठता तो टॉमी भी रंजनबाबू के कपड़े बार-बार खींचता, चुचकारने पर भाग जाता, और फिर उनके पास आ, तरह-तरह के प्यार की हरकतें करता- ''कभी भूकता, कभी रूठता, कभी छिपता, कभी प्रकट होता।'' रंजनबाबू उसके प्यार को देख बड़े प्रसन्न होते। और उसकी बात को समझ उसे भी जब कंधे पर बिठा लेते, तब वह शान्त होता। उन्हें टॉमी और टीपू में फर्क नहीं लगता। लोगों को भी यह फर्क मालुम ही नहीं पड़ता कि वे किसको अधिक या कम समझते हैं। लोग उनके इस प्रेम को देखकर चकित थे। सचमुच प्रेम आत्मा से होता है, नश्वर शरीर से नहीं। तभी तो हम किसी के मरने के बाद भी याद किया करते हैं, आहें भरते हैं। रंजनबाबू भी बाबला हो जाते, जब घंटा-दो-घंटा भी घर पर टॉमी को नहीं पाते।

एक दिन की बात है। नौकर राजू अपने घर गया था। उसके छोटे भाई की शादी थी। रंजन बाबू चिकन-मटन के बड़े शौकीन थे। आज बड़े शौक से वे खुद ही चिकन लाने

की योजना बना घर से निकल पड़े थे। कुत्ता टॉमी भी उनके साथ हो लिया। उनके डेरे से बाजार थोड़ी दूर था। रास्ते भर कभी आगे, कभी पीछे, उनके पैर से पैर मिला टॉमी साथ चलता रहा। दूकान नजर आई। वहाँ ग्राहकों की काफी भीड़ थी। सोंचा, वहाँ चलकर खड़ा रहने से अच्छा है, पान का आनन्द ले लूँ। पर, आजकल प्रायः सभी दूकानों पर ग्राहकों की काफी भीड़ रहती है, चाहे वह मूंगफली की ही क्यों न हो। पान खाया और वहाँ पूर्व से खड़े एक साथी से गप करने लगे। यूं, अपनी जातीय आदतवश टॉमी कभी-कभार इधर-उधर भी चल देता, लेकिन फिर वहीं आ खड़ा होता। गपशप में ही रंजनबाबू की निगाह चिकन दूकान पर भी चली जाती।

रंजनबाबू ने देखा, दूकान पर अब बहुत ही कम भीड़ है। मामूली, दो-चार ग्राहक ही हैं। झट, वे भी वहाँ पहुँच गए। कुत्ता भी साथ था। ग्राहकों की माँग के अनुसार विक्रेता ने सबको संतुष्ट किया। अब साहब की वारी थी। साहब ने भी अपनी मांग सुनाई। दूकानदार ने मुर्गे की तौल की। मुर्गा चों-चों करने लगा। कुत्ते के कान खड़के। कुत्ता स्तब्ध वहीं खड़ा रहा। बाद, मुर्गे को टीन में डाला। मुर्गा जोर-जोर से पंख फड़फड़ाने लगा और जोर-जोर से चां-चों करने लगा, मानो सहायता के लिए पुकार रहा हो। बाद चीक ने छूरा से गला रेत काम तमाम कर दिया और खून से लथपथ मुर्गा को बाहर बाहर निकाला।

साहब इस दृश्य को बड़े चाव से देख रहे थे। वे न इधर देखते न उधर, मानो अचल समाधि में उूबे गये हों, अलौकिक परमानन्द की प्राप्ति हो रही हो। उन्होंने अपना झोला फैलाया और बचा-खुचा संस्कार घर में ही कर लेने की बात सोंच कदम आगे बढ़ाया। कुत्ता टॉमी को बलग में नहीं पाया। इधर-उधर निगाह दौड़ाई। टॉमी पूँछ उठाए, कान खड़ा किए, दौड़ा भागा जा रहा था। इन्होंने हाँक लगाई। टॉमी थोड़ा ठिठका, पीछे देखा, फिर अपनी रफ्तार तेज कर उनकी आँखों से अपने को दूर कर लिया।

रंजनबाबू को लगा, यह जानवरों की आदत है; यह जायेगा कहां, घर पर मिलेगा।

टॉमी दौड़ता घर आया। घर को अच्छी तरह देखा। फिर एक चोट खाए समझदार प्राणी की तरह, भों-भों करता सबसे मिला, सब के पास बैठा, बाद कुछ ही क्षण में घर से आहर निकल अज्ञात में कहीं खो गया।

अब रंजनबाबू घर पहुंचे तो टॉमी को नहीं देखा। अक्सर होता यह था कि जब-जब रंजनबाबू बाहर से घर आते, टॉमी उनके पास आ अपनी पूँछ से उनका पैर सहलाता और अपनी समस्त संवेदनाओं का इजहार अपनी भाषा में, अपने ढंग से कर जाता। लेकिन आज घर उनके लिए अटपटा सूना, लग रहा था। टॉमी को पुकारा, अपनी आँखें दौड़ाई और घर के सभी सदस्यों से एक-एक कर पूछा। सब ने केवल यही बताया कि ''अभी-अभी यहीं था; कहीं होगा, लेकिन आज उसका मिजाज कुछ अजब बदला सा लग रहा था।'' रंजन बाबू हलकान थे। उनसे कुछ बोलते नहीं बन रहा था कि आखिर बात क्या है।

रात अधिक हो गई थी। टॉमी के घर में ढूँढ़ा, अगल-बलग की गलियों में ढूँढ़ा, कहीं अता-पता नहीं चला। हार कर घर आए। झोला में लाया चिकन ज्यों का त्यों बड़ा रह

गया। किसी ने नहीं खाया।

रंजनबाबू को करवटें बदलते रात बीच गई। मन रातभर खुदबुदाता रहा कि आखिर टॉमी कहाँ गया और क्यों गया। हाँ, इतना तो स्पष्ट हो चुका था कि वह अब यहाँ नहीं है। रात किसी तरह बिताई।

सुबह आँख खुलते ही उन्होंने टोले-मुहल्ले की खाक छानना शुरू कर दिया। जो भी मिलता सब से टॉमी के बारे में पूछते। ढूँढते-ढूढते जब वे थक गए तो थोड़ा विश्राम की नीयत से एक झोपड़ी के पास जाकर बैठ गए। झोपड़ी बाँस के एक झुरमुट के नीचे बनी थी जिसमें गाँव को ही एक भिखारिन बुढ़िया रहती थी। रंजनबाबू उस बुढ़िया को पहचानते थे। बुढ़िया भी उन्हें अच्छी तरह जानती थी। रंजनबाबू अच्छे खासे पैसे वाले व्यक्ति थे, और सब उन्हें भले इंसान के रूप में दशकों से जानते थे। आज जब बुढ़िया भीख मांगकर दरबाजे पर लौटी तो रंजनबाबू को देख सन्न हो गई।

सूरज डूबनेवाला था, संध्या पसर चुकी थी। पक्षी अपने-अपने नीड़ में लौटकर बच्चों से क्षेम-कुशल पूछ रहे थे और अगल-बगल के हितैसियों मिल-जुल रहे थे, जिस कारण वह स्थान पंक्षियों की चहचहाहट से गुंजान था। अब बुढ़िया ने जब रंजन बाबू देखा तो बहुत सकुचाते-सकुचाते पूछा- ''बाबू, आज भरल सँझा में अपने इधर कैसे? कुछ बात है की? मालकिन के कुछ औडर है की? धान-ऊन फटके के है की?'' रंजनबाबू ने कहा- ''नञ दादी, आज ऐसैं इधर आबे के ईच्छा कर गेल।'' इतन कह रंजनबाबू वहां से चल दिए।

घर आकर रात किसी प्रकार बिताई। अवश्य, पर जी न लगा। सुबह फिर बिना खाए-पिए ही घर से किनल गए। आज बगल के गांव में भी जाकर ढूंढ़ा, पर पता नहीं चला। वे चिन्तित मन फिर बुढ़िया भिखारिन की झोपड़ी के पास आकर बैठ गए। बुढ़िया वहीं बैठी थी। उन्होंने पूछा- ''दादी, मेरा कुत्ता टॉमी खो गया है। क्या किसी कुत्ते पर नजर पड़ी है? बुढ़िया ने कहा-''बेटा, यहाँ तो ढेर कुत्ता हय, लेकिन कल से एक नया कुत्ता देख रहलूँ हैं। बड़ी सपूत कुत्ता है। ऊ हमरे कर्गी आ के बैठे हे। रतिया तो हमरे कर्गी सुतल भी हल। ऊ दुखछल लगे है।'' इतना सुन कर रंजनबाबू ने पूछा- ''दादी, की ऊ अभियो एहैं हे?'' दादी ने कहा- ''हां बेटा''। भिखारिन बुढ़िया रंजनबाबू को साथ ले अपने खाट तक लाई, जहां कुत्ता बैठा था। रंजनबाबू ने कुत्ता को पहचान लिया और फूट-फूट कर रोने लगे। कुत्ता ने भी देखा, लेकिन फिर मुँह घुमा लिया। उन्होंने देखा, कुत्ता का पेट धँसा था और मुँह उदास था।

रंजनबाबू ने अपने साथ लाई कुछ रोटियाँ और बिस्कूट खाने को दिए, लेकिन नहीं खाया। उसे प्यार से चूमना और उठाना चाहा, पर वैसा होने नहीं दिया, उलटे भूकने लगा। रंजनबाबू निराश हो चल दिए, पर जाते-जाते बुढ़िया से कहते गए- ''दादी, मर टॉमी पर धेआन दीहें। खाना-पानी भी दीहें, हो सके खा ले।''

रंजनबाबू घर आये और सारी बात परिवार वालों को बताई। सब दुखी हुए और मन-ही-मन अपने भीतर और बाहर झांकने लगे। किसी को कोई ओर-छोर पता न चला। दूसरे दिन रंजनबाबू खूब सुबह सारे परिवार के साथ भिखारिन बुढ़िया के घर गए और उसे भरपूर मनाने का प्रयास

किया। साथ लाई रोटियाँ और मिठाइयां भी दीं, पर उसने अपना मस्तक तक नहीं हिलाया उलटे खुखुआने लगा। बुढ़िया ने बताया- ''बेटा, ई तो अजब कुत्ता हौ, नञ तो खा हौ, नञ तो कहीं जा हौ।'' सब चुपचाप सुन रहे थे, और भीतर ही भीतर घुंट रहे थे, आत्म-चिंतन कर रहे थे। फिर सभी चले गए और शीघ्र की अपनी बूढ़ी दादी के साथ लौट आए। बूढ़ी दादी को देख कुत्ता उनकी गोद में चला आया। दादी ने उसे अपने हाथ से खाना-पानी दिया और प्रेम से सहलाते हुए कहा- ''टॉमी बेटा, अपने भाई की माँफ कर दो। मैं इन लोगों की ओर से वचन देती हूँ, ये लोग अब मांस नहीं खाएंगे। मान जाओ मेरा टॉमी, चलो अपना घर। तुम नहीं चलोगे तो मैं भी भूखी रहूंगी।'' इतना सुन टॉमी दादी के पैर पर जाकर बैठ गया। परिवार के अन्य लोगों ने भी हाथ उठाकर कहा- ''हां हमलोग भी मांस नहीं खाएगें।''

❖

रामकथा का अवतरण

(वाल्मीकि रामायण से)

महर्षि वाल्मीकि अपने आश्रम में तप कर रहे थे। एक दिन उन्होंने तपस्या एवं वेदाध्ययन में लीन महामुनि नारद से पूछा – 'हे नारद! इस लोक में इस समय कौन ऐसा व्यक्ति है, जो गुणी, बलवान्, धर्मज्ञ, कृतज्ञ, सत्यवादी, दृढ़निश्चयी, चरित्रवान् आदि आदर्श नायक के लक्षणों से युक्त है।' तीनों लोकों के ज्ञाता नारद ने वाल्मीकि से कहा – 'मुनिवर! इन गुणों से युक्त तो इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न श्रीराम ही है। वे महातेजस्वी, जितेन्द्रिय, बुद्धिमान् एवं नीतिमान् हैं।' नारद श्रीराम के गुणों का बखान करते जा रहे थे। फिर बाद में उन्होंने सम्पूर्ण राम-कथा संक्षिप्त में सुना दी।

नारद से पूरी राम कथा सुनकर उनका आतिथ्य कर वाल्मीकि अपने शिष्यों के साथ मध्याह्न -स्नान करने के लिए तमसा तट की ओर चले। तट पर पहुँचकर उन्होंने अपने शिष्य भरद्वाज से वल्कल आदि रखने के लिए कहा। इसी बीच उन्होंने एक पक्षी का करुण क्रन्दन सुना। वह 'क्रौंची' मादा पक्षी थी। उसके नर क्रौंच को एक व्याध ने बाण से मार गिराया था। महर्षि द्रवित हो उठे – 'अरे निर्दयी व्याध! तुमने जो क्रौंच के जोड़े में से एक को मार डाला इससे तेरा यश तो नहीं होगा?' ये शब्द महर्षि के मुख से अनायास निकल पड़े थे। बाद में उन्होंने सोचा कि यह मैंने क्या कह डाला। उन्होंने भरद्वाज से कहा – 'इस पक्षी के शोक में मेरे मुख से जो वाणी निकली उसमें तो समान वर्ण-संख्या से युक्त चार 'चरण' भी हैं। इसे वीणा के साथ गाया भी जा सकता है। ठीक है, आज से इसे 'श्लोक' कहा जाए।' स्नानादि सम्पन्न कर सभी आश्रम लौट पड़े। महर्षि वाल्मीकि इसी 'श्लोक' के विषय में सोचते रहे। इसी बीच ब्रह्मा उस आश्रम पर पधारे। वाल्मीकि ने उनसे भी इस पूरी घटना की चर्चा की तो उन्होंने वाल्मीकि को इसी 'श्लोक' नामक छन्द में रामकथा लिख देने की प्रेरणा दी। ब्रह्मा के अन्तर्धान हो जाने के बाद महर्षि ने भी समास, सन्धि आदि व्याकरणिक नियमों तथा समता, माधुर्य आदि काव्य-गुणों पर विचार करते हुए पूरी राम-कथा लिख डाली।

ईश्वरानुभूति

पं. सुरेशचन्द्र मिश्र

भगवान् बड़ा उदार है। आपको पता भी नहीं चलेगा और प्रभु अपनी अपार कृपा–वर्षा से आपको भर जाएगा। आपका काम नहीं हो रहा है, इसके लिए आपकी चिन्ता कुछ अर्थों में अनिवार्य है; क्योंकि आप संसारी पुरुष हैं। हाड़–मांस का शरीर और एक भरा–पूरा परिवार देकर भगवान् ने बड़ी कृपा कर आपको यहाँ भेजा है; यह इसलिए कि आप सदैव उसकी तारीफ़ बज़ाया करें और यह भी कि उसके दिए गए कामों को बाखूबी निभाने में भरसक न चूकें। आप अपना अहोभाग्य समझें कि आपने मानव जीवन पाया हैं। सचमुच, आपको भगवान् का पुरस्कार है यह जीवन । इस कारण उसकी दी गई वस्तुओं की रक्षा करना आपका परम कर्त्तव्य है। आप कभी रोग–ग्रसित होते हैं, अथवा परिवार में कोई आधि–व्याधि आती है तो आप यह जानें कि निश्चित, आपसे कोई भूल हुई है, अथवा प्रमादवश ही सही, आपने अवश्य कोई गलती की है। क्या आपने कभी अपने को टटोला है, इसका कारण क्या है? अगर नहीं, तो आप ज़रा समझने का प्रयास कीजिए। हाँ, मैं मानता हूँ, यह बात आपकी समझ से परे भी हो सकती है, और इस काम में आपकी बुद्धि नाकाम भी साबित हो सकती है। पर, इसके लिए आपको घबराना नहीं है। मैं तो कहूँगा, लगे रहिए, विश्वास न छोड़िए। आइये, इसी परिप्रेक्ष्य में एक आपबीती बात मैं आप श्रद्धावान् भक्तों को सुनाता हूँ। हो सकता है, कुछ बात बने, भटका मन स्थिर हो जाए और आप अपनी भूल को सुधारने में लग जाएँ।

मैं हाई स्कूल का एक सीधा–सादा शिक्षक हूँ, जिसे सिर्फ़ और सिर्फ़ अपने पाठ्य–विषयों से मतलब है। उलूल–जुलूल के कोकस–फोकस, चाट–चमचा से मैं सदा ही परहेज़ करता रहा हूँ। मेरी पढ़ाई से बच्चे संतुष्ट हों, जो विषयगत प्रश्न हों उनका मैं संतोषप्रद ज़बाब दे छात्रों को खुश कर सकूँ, इससे ज्यादा मैंने कभी चाहा ही नहीं।

सच पूछिए तो मैं अपने–आपसे बहुत खुश था; क्योंकि इससे ज्यादा मुझे और चाहिए ही क्या? घर में अनुशासित बच्चे हैं, सुघड़ आज्ञाकारिणी पत्नी है, और दयालु प्रभु श्रीरामजी की ओर से दोनो जून नमक–रोटी का संतोषप्रद प्रबंध है। फिर, चिन्ता किस बात की?– ''जा पर राम सहाय है, सो नर गरजत क्यों न चले।''–की बात मुझे सत्य लग रही थी। पर, अचानक ही जीवन में एक असोंचा भूचाल आ गया। जीवन नैया अप्रत्याशित डगमगाने लगी।

बात सन् 1995–96 की है। सरकार की ओर से एक विकट गुमशुदा विद्यालय में मेंरा स्थानान्तरण कर दिया गया, जहाँ का नाम न तो पहले मैंने कभी सुना था और न

मेरी जान–पहचान के साथियों ने ही। आस–पास के विद्यालयों में भी जाकर पूछा, पर सभी ने असहमति ही व्यक्त की। हार कर विद्यालयों का गजेटियर निकाला। लोकेशन ढूँढा। जिधर से भी जा़या जाए, पन्द्रह किलोमीटर पैदल चलना अनिवार्य था। और, खास बात यह थी कि वहाँ तक न कोई पक्की सड़क जाती थी और न साइकिल से ही जाने का ही कोई सुगम मार्ग था। कहीं मेंड़नुमा रास्ते थे तो कहीं ऊँची–ऊँची अलंगें। और अगर पैर फिसले तो नीचे 20 फीट खाई की असुरक्षित गोद। बुद्धि सोच–सोंच कर चकरा जाती थी कि आखिर क्या किया जाए। रात को अच्छी नींद नहीं आती कि आगे विभागीय कार्रवाई का कौन–सा सुरसा विकराल मुँह फाड़े लीलने को दरबाजे पर खड़ा मिलेगाा।

आखिर, मैने तय किया, किसी तरह रात बीते, कल किसी चेला को साथ ले, विद्यालय की दिशा में पाँव बढ़ाऊँगा। इतना सोंचते–सोंचते आँख थोड़ी लगी, तभी विद्यालय का रास्ता आँख के आगे खुलने लगा। देखा, एक तालाब है, वहाँ किनारे पर एक काली मन्दिर है। आगे थोड़ी दूर मेड़नुमा रास्ता है, और फिर एक नदी है। नदी के दोनों किनारों पर बँसबिट्टी है। बँसबिट्टी के उस पार एक गाँव है। गाँव से पूरब नहर की गोद से चिपका एक उदास विद्यालय है, पास ही एक छोटा मन्दिर है; जहाँ से धूप का धुआँ निकल रहा है। दो–चार अगरबत्तियाँ जल रहीं हैं, जिसकी सुगंध से वातावरण सुवासित है।। विद्यालय जाने के लिए गाँव के मध्य से एक रास्ता है। गाँव के रास्ते में एक पुराने मकान का भग्नावशेष है। वहाँ मात्र दीवाल खड़ी है, न कोई छाजन है, न कोई छप्पर। दीवाल के ऊपर दस–बारह काठ के घोड़मुँहमें तिरछी नज़र से सब को ताक रहे हैं, और जो विना कुछ बोले भी बहुत कुछ कह रहे है। इस दृश्य को देखकर 'बेनीपुरी' की पंक्ति याद आ जाती है–''खंडहर बताता है, इमारत बुलन्द रही होगी।'' बूढ़े सरकार कभी सुन्दर भी रहे होंगे। इतना देखते–देखते आँखें खुल जाती हैं; माँ दुर्गा का स्मरण करता हूँ, और अगले दिन किसी विद्यार्थी को साथ लेकर स्वतः चलने की हिम्मत जुटाता हूँ।

सुबह स्नान–ध्यान कर , अपने गावँ से 26 किलोमीटर साइकिल से चलकर मैं लोहान गाँव पहुँच गया, जहाँ मेंरा एक विद्यार्थी मेंरी प्रतीक्षा करता खड़ा दीखा। मैं रुका और दृश्य देखकर दंग रह गया। देखता हूँ ,वहाँ एक बड़ा–सा तालाब है और किनारे पर माँ दुर्गा का एक भव्य मन्दिर है; यह ठीक वैसा ही है जैसा मैंने रात को आँख झपकते स्वप्न में देखा था। मेंरे आश्चर्य और कुतूहल का ठिकाना न रहा। मैंने मन–ही–मन भगवान् को धन्यवाद दिया और आगे बढ़ा। आगे बढ़ते ही विद्यार्थी ने कहा, '' सर, आगे साइकिल नहीं जाती है, क्योंकि रोड नहीं है और केवल मेंड़–ही–मेंड़ है। मैंने साइकिल रख दी और आगे के लिए पैर बढ़ाया। आगे देखा, एक छोटी नदी है, और किनारे पर बड़े–बड़े बाँस के वन हैं। यह देखकर पुनः सपने की झलक को चमक मिली। सत्यता का आभास हुआ। पुनः, आगे दीख रहे गाँव में प्रवेश किया और यह भी पता चला कि गाँव से बाहर ही 'छतिऐनी' विद्यालय है, जहाँ

मेंरा स्थानान्तरण हुआ था। गाँव की गलियों से गुजरते हुए देखा ,एक नंगी दीवाल खड़ी है, जिस पर कुछ घोड़मुहमें झाँक रहे हैं। समूची दीवाल वर्षा होने से भीगी हुई है। इसे देखकर मुँह पर हँसी आ गई, और पराशक्ति की अलौकिकता पर विचित्र आह्लादिकता भी। पुनः, विना बिलम्ब किए आगे बढ़ा। तत्पश्चात् आगे जो दिखा, उसे देखकर तो मैं एकदम ही दंग रह गया। ठीक नहर की कोख में वसा मेरा नन्हा विद्यालय; जिसे देखकर सहज ही उसके अतीत के सौभाग्य–दुर्भाग्य के चित्र उभर आए। दया आती थी उसे देखकर। लगता था, तेज जल–धारा ने अकिंचन बना दिया है मेरे इस ज़हाँपनाह (विद्यालय़) को। मैंने गौर से इधर–उधर देखा। विद्यालय से सटे एक छोटा मन्दिर है, जहाँ अब भी धूप जल रहे हैं। दो–चार ग्रामीण स्त्रियाँ पूजा कर हाथ में थाल लिए अपने–अपने घरों की ओर प्रस्थान कर रहीं है। इस दृश्य को देखकर मेरे आश्चर्य की सीमा न रही। मुझे बार–बार भगवान् की अपरम्पारता की पुष्टि मिलती रही।

इसी संदर्भ में मैं अपनी एक और छोटी–सी धटना आप सबसे कहने में हिचकिचाहट महसूस नहीं करता, क्योंकि, सच कहने में संकोच कैसा। सचमुच, जीवन, घटित घटनाओं की शृंखला का ही तो जुड़ाव है न। अगर आपमें सच्ची भक्ति है तो कब और कैसे वह अपनी एक झलक दे जाएगा, पता नहीं।

बात ऐसी है, मैंने सन् 1975–76 में 'पटना में माध्यमिक शिक्षा सेवा आयोग' में अपनी बहाली के लिए साक्षात्कार दिया था। कुछ दिनों बाद मुझे यह भी पता चला कि मेरा चयन हो गया है। उसी समय मैं अपने एक रिश्तेदार के यहाँ से घर लौट रहा था। रास्ते में रोड पर एक विद्यालय पड़ता था, वहाँ मेरे बड़े भाई के एक साथी पढ़ाते थे। मैं बस से उतर कर उनके शुभ दर्शन हेतु विद्यालय गया। वहाँ के शिक्षकों का आपसी प्रेम और सद्व्यवहार देख मुझे लगा, काश! इसी विद्यालय में मेंरा योगदान होता तो मेंरे लिए सौभाग्य की बात होती। संयोग कुछ ऐसा कि, जब मैंने सुना कि आयोग से योगदान करने का पत्र निर्गत हो रहा है, मैंने बड़ी जिज्ञासापूर्वक पटना आने को ठाना। घर से पिताजी से पैसे लेकर पटना आया, और सीधा डायरेक्टर कार्यालय पहुँच गया। कौन–सा किरानी पत्र निर्गत कर रहा है, इसकी जानकारी लेकर मैं उस किरानी की टेबुल पर गया। देखा, फाइल निकली हुई है। किरानी महोदय योगदान करानेवाली चिट्ठियों को इनभेलप में तल्लीनतापूर्वक भर रहे हैं। मेरी निगाह उस लिस्ट पर गई, जिसपर सभी योगदानकर्त्ताओं के नाम लिखे थे। मैं खड़ा–खड़ा उस लिस्ट को पढ़ने लगा। कुछ ही क्षण बाद मेरी निगाह अपने नाम पर गई, और मैं आश्चर्य में डूब गया। मैंने देखा, मेरे नाम के सामने उस विद्यालय का ही नाम लिखा था, जिसकी चाहत मुझे थी। मैं झट वहाँ से चल दिया। वहाँ काम करता किरानी मुझसे कुछ पूछना चाहा, लेकिन मैं पुनः लौट आने की बात कहकर कमरे से बाहर निकल गया।

❖

वास्तु-विज्ञान-विमर्श

❑ डा० राजनाथ झा

हमारा घर देवताओं का निवासस्थान है, तभी तो हम उनके साथ सुखचैन से रह पाते है। यदि घर में वास्तु- सम्बन्धी दोष होंगे तो अनेक बाधाएँ आ सकतीं है। यह परिकल्पना भी अत्यन्त प्राचीन है। वाल्मीकि रामायण में भी श्रीराम लक्ष्मण से कहते हैं- हे लक्ष्मण, जहाँ उत्तर-पूर्व की ओर ढाल हो वहाँ हमलोगों के लिए निवासस्थान उत्तम होगा- **प्रागुदक्प्लवने देशे गुहा साधु भविष्यति।** सनातन परम्परा में इस वास्तु-शास्त्र की पुष्ट अवधारणा मिलती है। फलतः ज्यौतिष् विज्ञान के अन्तर्गत यह एक शाखा के रूप में स्थापित है। यहाँ इस शास्त्र का व्यावहारिक दिग्दर्शन प्रस्तुत है।

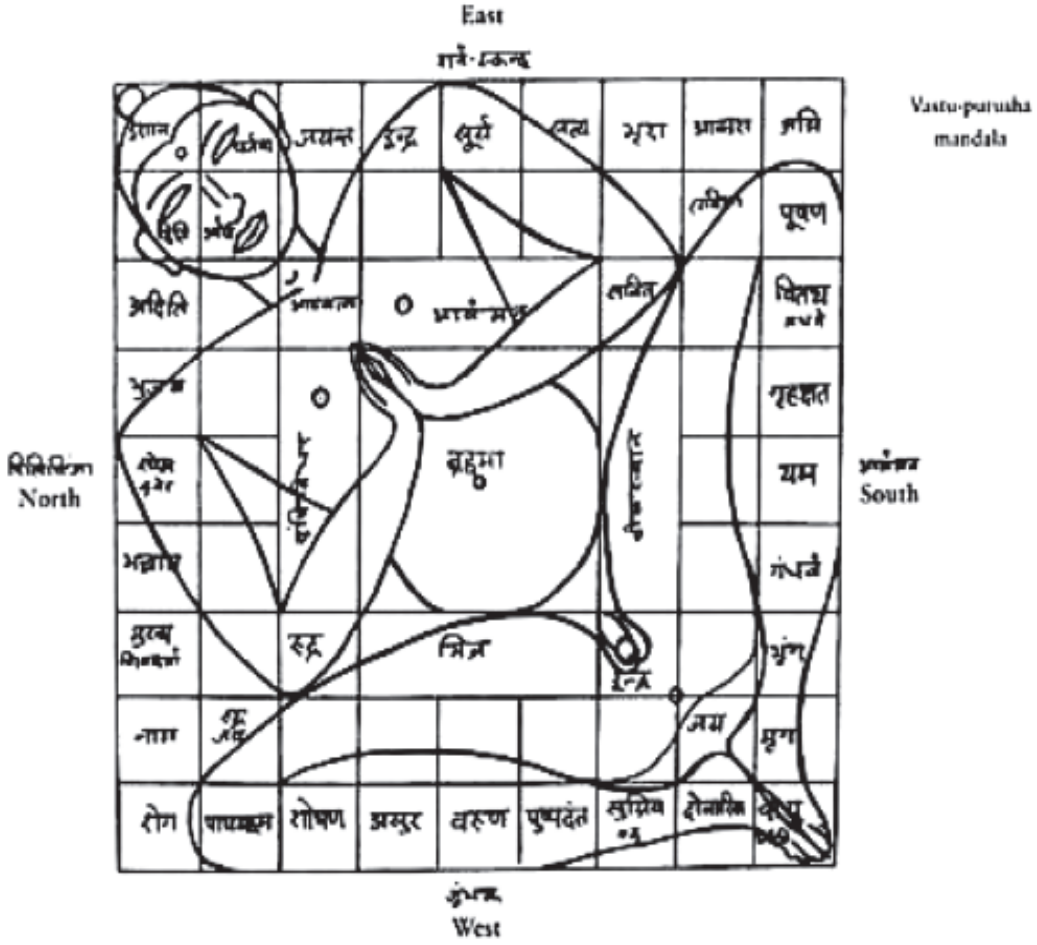

वैदिक वाङ्मय में 'वास्तु' शब्द का अर्थ है गृह निर्माण करने योग्य भूमि। 'वस् वासे' धातु से वास्तु शब्द बना है और इस शब्द का निर्वचन है वसन्त्यस्मिन्निति वास्तु अर्थात् जिसमें मनुष्य रहते हैं। इस प्रकार वे मकान, महल, भवन, नगर मन्दिर आदि, जिनमें मनुष्य रहते हैं वे वास्तु कहलाते हैं। इस वास्तु के वैदिक देवता का नाम वास्तोस्पति है।

प्राचीन भारत के इतिहास में जिन ग्रन्थों में वास्तुशास्त्र का उल्लेख मिलता है, वे इस प्रकार है-

1. वेद-ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद
2. पुराण- मत्स्यपुराण, ब्रह्मवैवर्त्तपुराण, स्कन्दपुराण, अग्निपुराण, देवीभागवत पुराण, गरुडपुराण, श्रीमद्भागवत महापुराण, भविष्योत्तर पुराण।
3. प्राचीन साहित्य-वाल्मीकि-रामायण, महाभारत।
4. प्राचीन वास्तुग्रन्थ-बृहत्संहिता, विश्वकर्मा वास्तुशास्त्र, समरांगणसूत्रधार, अपराजितपृच्छ, जयपृष्ठ, प्रमाणमंजरी, मानसार आदि ग्रंथों में।
5. अन्य वास्तुग्रन्थ- वास्तुराजवल्लभ, प्रसार मण्डन, वास्तुमण्डन, शिल्परत्न, वास्तुरत्नाकर, मुर्हूतचिंतामणि, मूर्हूतगणपति, बृहद्-वास्तुमाला आदि, अनेक ग्रंथ वास्तुशास्त्र के उपलब्ध हैं।

मत्स्यपुराण में वास्तुशास्त्र के अष्टादश प्रवर्तक भी बतलाये गये हैं। 1. भृगु 2. अत्रि 3. वसिष्ठ 4. विश्वकर्मा 5. मय 6. नारद, 7. नग्नजित, 8. विशालाक्ष, 9. पुरन्दर, 10. ब्रह्मा, 11. कुमार, 12. शौनक, 13. नन्दीश, 14. गर्ग, 15. वासुदेव, 16. अनिरुद्ध, 17. शुक्र, 18. बृहस्पति। बृहत संहिता में इनके अलावा भास्कर एवं मनु का भी नाम मिलता है।

इस तरह से देखा जाय तो वैदिक काल से लेकर आज तक हमारे देश में वास्तुशास्त्र के उद्भव एवं विकास की दृष्टि से पर्याप्त सामग्री मिलती है। वास्तुशास्त्र वह शास्त्र है, जो मनुष्य को कल्याण मार्ग की ओर अग्रसर करता है, विश्वकर्मा जी ने कहा है।

"वास्तुशास्त्रं प्रवक्ष्यामि लोकानां हितकाम्यया।।

अर्थात् लोककल्याण की इच्छा से ही वास्तुशास्त्र का प्रतिपादन किया गया है और शास्त्रों में सभी आश्रमों से श्रेष्ठ गृहस्थाश्रम को ही माना गया है और सभी आश्रम गृहस्थाश्रम से ही चलते हैं।

वानप्रस्थो ब्रह्मचारी यतिश्च तथ द्विजः।
गृहस्थस्य प्रसादेन जीवन्त्येते यथातिथिः।।
गृहस्थ एव यजति गृहस्थस्तप्यते तपः।
ददाति च गृहस्थश्च तस्माच्छ्रेयो गृहाश्रमी।।1।।

इसलिए मानवमात्र को गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने के लिए स्त्री, पुत्र, पौत्रादि एवं सम्बन्धियों के स्नेह, सौम्यता, मृत्यु, जन्म, उत्पन्न क्लेशों से जप तथा धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, पुरुषार्थचतुष्टय प्राप्त करानेवाला गृह ही तो है। जैसे आचार्यो ने कहा है-

स्त्रीपुत्रादिकभोगसौख्यजननं धर्मार्थकामप्रदम्।
जन्तूनामयनं सुखास्पदमिदं शीताम्बुघर्मापहम्।।

आगे वास्तुरत्नाकरकार ये भी कहते हैं कि घर बनाने से भी अनन्त पुण्य की प्राप्त होता है यथा-

कोटिघ्नं तृणजे पुण्यं मृण्मये दशसङ्घृणम्।
ऐष्टिके शतकोटिघ्नं शैलेऽनन्तं फलं भवेत्।।2।।

अर्थात् खर-पतवार निर्मित घर बनाने में लाख गुणा पुण्य, मिट्टी से गृह निर्माण करने पर दस लाख गुणा पुण्य, ईंट से गृह निर्माण करने पर एक सौ लाख करोड़ गुणा पुण्य और पत्थर से गृह निर्माण करने पर घर बनाने वाले को अनन्त पुण्य की प्राप्ति होती है।

पता नहीं क्यों, आज के कतिपय आधुनिक वास्तुशास्त्री वास्तुशास्त्र को स्वीकार करते हुए भी ज्योतिष शास्त्र को ही नकारने लगे हैं। वस्तुतः यह प्रवृत्ति तथ्य और तर्क से परे हैं। क्योंकि इन शास्त्रों में अंग-अंगीभाव- जैसा अटूट सम्बन्ध है और ये दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। इसलिए यदि जीवन के घटनाचक्र का विचार, जीवन की समस्या एवं संकटों की व्याख्या और उनके कारण एवं निराकरण का सही-सही ज्ञान करना हो तो वास्तुशास्त्र के साथ-साथ ज्योतिषशास्त्र की सहायता लेनी चाहिए। अन्यथा सीमित एवं एकपक्षीय जानकारी के कारण अनेक समस्यायें अपने समाधान की ओर मुँह ताकती रह जायेंगी।

यदि वास्तु का विचार करते समय ज्योतिष का विचार न किया जाय, तो शिलान्यास, गृहारम्भ, द्वारस्थापना एवं गृहप्रवेश के मुहूर्तो की जानकारी नहीं हो सकती। इसके अलावा किस व्यक्ति को भूमि एवं भवन का सुख मिलेगा और किसको नहीं मिलेगा कौन नया घर या बंगला खरीदेगा और कौन पैतृक जायदाद को भी बेच देगा? तथा कौन कब

नया मकान बनायेगा? या बेच देगा? आदि कुछ ऐसे प्रश्न हैं- जिनका विचार एवं समुचित उत्तर ज्योतिषशास्त्र के द्वारा ही मिल सकता है।

अत: वास्तुशास्त्र का अध्ययन करने से पूर्व इन दोनों शास्त्रों के आपसी सम्बन्ध, विचार क्षेत्र, सीमाएं जीवन के घटना-चक्र के बारे में इनकी दृष्टियों की जानकारी कर लेनी चाहिए, तभी भूखण्ड के चयन, भवन निर्माण और उसमें रहने वाले लोगों के जीवन में सन्तुष्टि का पुर्वानुमान किया जा सकता है।

वस्तुत: वास्तुशास्त्र का अध्ययन भारतीय ज्योतिष की एक शाखा है। ये दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। इनमें किसी प्रकार का अन्तर्विरोध नहीं है। ये दोनों जीवन के घटनाचक्र को अनुकूल बनाने के लिए हमें तथ्यमूलक जानकारी देते हैं।

भूमि एवं भवन का सुख मिलेगा या नहीं-

व्यक्ति को अपने जीवन में भूमि एवं भवन का सुख मिलेगा या नहीं? इस प्रश्न का फलित ज्योतिष के जातक ग्रन्थों में विस्तार से विचार किया गया है जातक ग्रन्थों में इसका निश्चय करने के लिए अनेक योगों का वर्णन मिलता है, जिनमें से कुछ महत्वपूर्ण योग इस प्रकार है-

भूमि-भवन का सुख न मिलने के योग-

1. यदि चतुर्थेश नीच राशि का शत्रुराशि में कालाग्नि, शूल अथवा अन्तक के षष्ठ्यंश में हो।
2. यदि चतुर्थेश निर्बल हो और पापग्रहों से युत-दृष्टि हो।
3. यदि चतुर्थेश एवं लग्नेश परस्पर एक-दूसरे के शत्रु हों।
4. चतुर्थस्थान में दो या अधिक पाग्रह हों और उन पर पाग्रहों की दृष्टि हो।
5. चतुर्थभाव में शनि हो और चतुर्थेश त्रिक स्थान में हो।
6. चतुर्थश अष्टम में हो और षष्ठेश चतुर्थभाव में हो।
7. द्वितीयेश, चतुर्थेश एवं द्वादशेश त्रिक भावों में हों।
8. दशमेश पापग्रह के साथ चतुर्थ भाव में हो।
9. दशमेश एवं अष्टमेश दोनों साथ-साथ हों और दशमेश क्रूरांशक या मृत्युकर षष्ठ्यंश में हो।
10. यदि चतुर्थेश एवं मंगल नीचस्थ, पापयुक्त, पापदृष्ट या पाप मध्यस्थ हो।
11. यदि चतुर्थेश द्वितीय भाव में स्थित हो और निर्बल या पापक्रान्त हो।
12. चतुर्थस्य पापग्रह की दशा अन्तर्दर्शा हो।
13. शनि, मंगल या गुलिक से युत चतुर्थेश की दशा अन्तर्दशा हो।
14. त्रिकभाव में स्थित चतुर्थेश की दशा अन्तर्दशा हो।

भूमि-भवन प्राप्त के योग-

1. चतुर्थभाव में शुभग्रह हो चतुर्थेश, शुभग्रह के साथ हो और उसका कारक शुभ स्थान में हो।
2. चतुर्थेश बलवान् हो और लग्नेश से उसकी मित्रता हो।
3. केन्द्र एवं त्रिकोण में बलवान ग्रह हो और चतुर्थेश उपचय स्थान में हो।
4. तृतीयभाव के शुभग्रह हो और चतुर्थेश बलवान हो।
5. चतुर्थेश लग्न या त्रिकोण में शुभग्रहों के साथ हो।
6. चतुर्थेश द्वादश स्थान में बलवान हो तो पुराना मकान मिलता है।
7. चतुर्थ कारक त्रिकोण में और चतुर्थेश पारावत गोपुरादि में हो तो बंगला या प्रासाद मिलता है।
8. तृतीय में शुभग्रह हों चतुर्थेश एवं लग्नेश बली हों, तो विस्तृत एवं भव्य मकान होता है।
9. चतुर्थेश पारावतांश या गोपुरांश में हो और उसपर चन्द्रमा एवं गुरू की दृष्टि हो तो भव्य भवन होता है।
10. चतुर्थभाव पर चन्द्र, बुध, गुरु, एवं शुक्र में से दो ग्रहों की दृष्टि हो और वे पाप ग्रह न हों।
11. चतुर्थभाव एवं कारक शुभग्रहों से युत-दृष्ट हो।
12. कारकांश कुण्डली में चतुर्थभाव में चन्द्रमा एवं शुक्र अथवा उच्च राशिगत ग्रह हो।

13. कारकांश कुण्डली में चतुर्थभाव में सूर्य हो तो घास-फूस की झोपड़ी या पर्णकुटी मिलती है।
14. कारकांश कुण्डली में चतुर्थभाव में गुरु हो, तो लकड़ी का मकान होता है।
15. कारकांश कुण्डली में चतुर्थभाव में बुध हों तो साधारण मकान या फ्लैट मिलता है।
16. चतुर्थभाव बुध से युत-दृष्ट हो और चतुर्थेश बलवान हो, तो भवन आलीशान होता है।
17. कारकांश कुण्डली में चतुर्थभाव में शुभ दृष्ट शनि हो, तो लोहा-सीमेंट से बना पक्का मकान होता है।
18. लग्नेश चतुर्थ में और चतुर्थेश लग्न में हो और दोनों बलवान हों, तो अच्छा मकान होता है।
19. चतुर्थेश एवं पंचमेश, चतुर्थेश एवं नवमेश या चतुर्थेश एवं एकादशेश में परिवर्तन योग हो तो अच्छा मकान होता है।
20. द्वितीयेश एवं एकादशेश चतुर्थ में और चतुर्थेश दशम में हो तो, भूमि/भवन से लाभ होता है।
21. लग्नेश एवं चतुर्थेश दोनों साथ-साथ केन्द्र में शुभ दृष्ट हो।
22. लग्नेश द्वितीयेश एवं चतुर्थेश जितने शुभ ग्रहों से दृष्ट हो उतने मकान मिलते हैं।
23. चन्द्रमा की दशा में शुक्र की अन्तर्दशा में भूमि भवन का लाभ होता है।
24. मंगल की दशा और शुक्र की अन्तर्दशा में भूमि/भवन का लाभ होता है।
25. मंगल दशा में उच्च, मूलत्रिकोण या स्वराशिगत शुक्र की मुक्ति में मंदिर, धर्मशाला बनाने का अवसर मिलता है।
26. गुरु उच्च, मूलत्रिकोण या स्वराशि में हो और चतुर्थेश से सम्बन्ध हो, तो उसकी दशामुक्ति में मकान बनता है।
27. ऐसे गुरु की दशा में शनि की अन्तर्दशा में पुराना मकान मिलता है या उसका जीर्णोद्धार होता है।
28. ऐसे गुरु की दशा में मंगल की भुक्ति में मकान बनता है।
29. ऐसे गुरु की दशा में बलवान शुक्र की अन्तर्दशा में होटल, रेस्ट्राँ, गेस्टहाउस, सिनेमा या रिसोर्ट का निर्माण होता है।
30. बलवान शुक्र की दशा में एवं शुभदृष्ट चतुर्थेश की अन्तर्दशा में होटल, रेस्टोरेन्ट, रिसोर्ट या गेस्टाहउस बनता है।
31. चतुर्थेश शुक्र की दशा में बुध या चन्द्रमा की भुक्ति में फार्म या फार्महाउस बनता है।
32. चतर्थेश, चतुर्थकारक एवं मंगल की दशा-अन्तर्दशा में मकान बनता है। इन योगों के माध्यम से किस व्यक्ति को मकान और मकान का सुख मिलेगा या नहीं? इसका विचार किया जा सकता है। वस्तुतः सुख शब्द का अर्थ अत्यन्त व्यापक है। मकान में रहने वाले परिवार के सदस्यों को शारीरिक, मानसिक, व्यावसायिक, सामाजिक या अन्यान्य कष्ट उनके सुख को छिन्न-भिन्न कर देते हैं। इन सभी प्रकार के कष्टों और उनके परिणामों का विचार ज्योतिषशास्त्र द्वारा योग दशा एवं गोचर के आधार पर किया जा सकता है।

<u>संदर्भग्रंथ</u>-

1. ज्योतिर्निबन्ध से
2. वास्तुरत्नाकर (1-1)
3. जातक पारिजात-तृतीयचतुर्थभावफलाध्याय (1-9)
4. ज्योतिष रत्नाकर-पृष्ट 334
5. वास्तु शास्त्र विमर्श
6. जातक पारिजात- तृतीयचतुर्थभावफलाध्याय (3-5)
7. जातक पारिजात- तृतीयचतुर्थभावफलाध्याय (6-13)
8. भारतीय वास्तु शास्त्र
9. वास्तु रत्नावली

❖❖

योगिराज श्री श्यामाचरण लाहिड़ी

डा. उमाशंकर सिंह

जब संपूर्ण जगत् आपदादि से ग्रस्त व धर्म विहीन दिखने लगता है, ऐहिकता, विलासिता तथा आडंबरप्रियता के घने कुहरे से उसका धर्माकाश निविड़ तमसाच्छादन होने लगता है, तब भी भा-रत भू पर शांतिप्रय तत्त्वज्ञानी, भगवत्प्राण भक्त, दिव्य साधक, महायोगी आदि का अभाव नहीं होता; उर्वर धरा भारत की माटी की यह अद्‌भुत विशेषता है ।

कविकुलगुरु कालिदास ने जिस महान विशाल देवभूमि भारतवर्ष की महिमागान करते हुए -''अस्त्युत्तरस्यां देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः। पूर्वौपरौ तोयनिधीवगाह्य स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः।।'' (भारत के उत्तर में पर्वतराज हिमालय-देवतात्मा- दोनों भुजाओं से पूर्व और पश्चिम समुद्र-तोयनिधि-को छूता हुआ इस प्रकार छाया हुआ हुआ है मानो पृथ्वी का मानदंड हो।) कहा है, उस भा (ज्ञान-प्रकाश) रत (लीन-डूबा हुआ-आप्लावित) भारताकाश में अगणित साधक समुज्ज्वल नक्षत्र के समान उदीयमान होकर न केवल पवित्र भूमि भारत की आध्यात्मिक संपद तथा अतुल्य गौरव की वृद्धि की है, बल्कि सपूर्ण जगती को अपने पावन चरण-स्पर्श से पवित्र भी किया है। इन दिव्य साधकों में योगिराज श्री श्यामाचरण लाहिड़ी का नाम बड़ा आदर के साथ लिया जाता है। आपके परम शिष्य श्रीमुक्तेश्वरजी से गुरुदीक्षा प्राप्त कर योगी कथामृत के रचयिता परमहंस योगानंद जी की कीर्ति-पताका आज भी देश-विदेश में शिखरित है।

आज मैं आपको इसी परम श्रद्धास्पद योगिराज श्री श्यामाचरण लाहिड़ी महाशय जो पार्थिवता-सर्वस्व नास्तिक-बहुल मानव समाज में भी चांचल्य विहीन, सत्यव्रत, नित्ययोगमग्न आनंद स्वरूप दिव्य महापुरुषों की तरह अपनी सतत सारस्वत धारा को प्रवाहित करते रहे, की कथा सुधा का आस्वादन कराने का प्रयास कर रहा हूँ।

योगिराज श्री श्यामाचरण लाहिड़ी महाशय जी की जो संक्षिप्त जीवनियाँ प्रकाशित हुई हैं उनमें उनमें उनके जन्म समय का ठीक-ठीक पता नहीं चलता। अपनी हस्तलिखित पुस्तिका में आपने स्वयं लिखा है कि "Birthdate exactly not know." आपके पौत्र श्रीमान् अभयाचरण लाहिड़ी तथा श्रीमान् आनंद मोहन लाहिड़ी ने आपका जन्म समय आश्विन शुक्ल सप्तमी संवत 1885 दिन मंगलवार तदनुसार 30 सितंबर 1828 ई0 स्वीकारा है। आपका जन्म बंगाल जिला के अंतर्गत सुप्रसिद्ध कस्बा कृष्ण नगर से लगी हुई और समीप बहनेवाली खड़िया नदी के तीरवर्ती घुरनी (घुरणी) नामक गाँव में वारेंद्र ब्राह्मण कुल में हुआ था। आपके पिता श्री गौर मोहन तथा माता श्रीमती मुक्तादेवी आपको पाकर धन्य हो गए। आपने न केवल अपने कुल को बल्कि संपूर्ण मानव समाज को उपकृत किया। धर्म-कर्म पूजा-अर्चन तथा दानादि में आपके वंश के लोगों की विशेष प्रतिष्ठा थी। आपके वंश के प्राचीन निवास स्थली, शिवमंदिर आदि खड़िया कदी के प्रबल बाढ़ के प्रवाह में भूमिसात् होकर नदी गर्भ में अदृश्य हो गये थे। कुछ दिनों के बाद आपके पिता सपरिवार काशी आ गये तथा वहाँ मदनपुरा महाल में सिमन चौहट्टा के समीप एक मकान खरीदकर रहने लगे।

जन्मांतर के संस्कार आपके जीवन को जिस ओर प्रवाहित करके ले जाने वाले थे उसकी सूचना आपके शैशव जीवन में ही परिलक्षित होती थी। बाल्यावस्था से ही आप शिशु सुलभ चापल्य को त्यागकर एकांत में अकेले पद्मासन लगाकर बैठे रहते थे।ठीक ही कहा गया है- 'होनहार विरवान के होत चिकने पात।' आप बहुभाषाविद् थे। हिंदी, अंग्रेजी, बांग्ला, अरबी के साथ-साथ आपने संस्कृत भाषा और साहित्य का गंभीर अध्ययन किया था। आपने षड्दर्शन, उपनिषद् तथा गीता, चरकसंहिता, मनुस्मृति आदि लगभग दो दर्जन से अधिक ग्रंथों की व्याख्या की है। वे ग्रंथ साधारण लोगों के लिए बोधगम्यगम्य न होने पर भी साधकों के लिए विशेष प्रयोजनीय है। श्री भूपेंद्रनाथ सान्यालजी ने आपके द्वारा की गई गीता की आध्यात्मिक व्याख्या को 'गीता की एक अपूर्व व्याख्या' कहते हुए लिखा है कि 'श्रीमदाचार्य लाहिड़ी महाशय ही सर्वप्रथम भारत में, विशेषतः बंगाल में गीता की आलोचना के प्रथम और प्रधान प्रवर्त्तक थे। उन्होंने गीता के संबंध में जो अभिनव व्याख्या जन-समाज में प्रचलित की थी, वह कदापि उपेक्षनीय नहीं है। क्योंकि इस प्रकार की योग संबंधी व्याख्या योगाभ्यासियों के लिए अत्यंत ही आवश्यक और समादर की वस्तु है।'

आप एक कुशल गृहस्थ थे । गृहस्थ जीवन के महिमागान से सद्ग्रंथ भरे पड़े हैं- 'शतपथ ब्राह्मण' में कहा गया है कि जब तक व्यक्ति पत्नी नहीं पाता तब तक अपूर्ण रहता है। **''यावज्जायां न विन्दते ... असर्वो हि तावद्भगति।''**

सन् 1846 ई0 में आपके साथ श्री

देवनारायण सान्याल की पुत्री श्रीमती काशीमणि देवी का पाणिग्रहण संस्कार संपन्न हुआ था। आपके पौत्र श्री मान् अभय ने आपकी भाग्यवती पत्नी के बारे में लिखा है कि ''काशिमणि देवी चिरजीवन शांति-प्रिय और सुशीला थीं तथा स्वामी की पारिवारिक कठिनाइयों के दिनों वह परम धैर्य के साथ गृहकार्य सँभालती थीं। वह सुगृहिणी थीं, उनके सुंदर विचार और व्यवस्था के द्वारा पति के सामान्य उपार्जन से घर-द्वार और संपत्ति संचय करना संभव हो गया था। मैंने उन्हें वृद्धावस्था में भी कभी आलस्य से समय काटते नहीं देखा। प्रातःकाल सर्वप्रथम आये हुए भिक्षुओं को वह अपने हाथ से भिक्षा देती थीं। उनका विश्वास था कि जिस घर को लक्ष्मी छोड़नेवाली होती हैं उस घर में भिखारी नहीं आता; इसलिए किसी भिखारी के आने में विलंब होता तो उनकी दुश्चिंता की सीमा नहीं रहती। इस पुण्यवती महिला ने सुदीर्घ जीवन धर्म पथ में और स्वामी के प्रदर्शित योगपथ की साधना में व्यतीत कर प्रायः 94-95 वर्ष के वयस में पूर्ण चैतन्य अवस्था में काशी लाभ किया। आय की कमी के कारण सारा गृहकार्य वह अपने हाथों करती थीं। प्रतिदिन उनके घर अनेक अतिथि भोजन करते थे। अपने हाथ से रसोई बनाकर उन सब को वह तृप्तिपूर्वक भोजन करती थीं। इस कारण उनको दिन में अधिक अवकाश नहीं मिलता था। रात को भोजन कराकर 10 बजे के बाद वह 3-4 घंटे प्रतिदिन नियमपूर्वक साधनाभ्यास में लगाती थीं।''

23वें वर्ष की अवस्था से आप सरकारी नौकरी करने लगे। सरकारी पूर्त्त विभाग (Public Work Department, Military Engineering Works) में काम करते हुए आपने मिर्जापुर, कटया, बक्सर, गोरखपुर, दानापुर, रानीखेत, काशी आदि स्थानों में सेवा का सुअवसर पाया।

आप दिन भर नौकरी के दायित्वों का निर्वहन करते हुए गृहशिक्षा का कार्य सम्पन्न

कर तथा गृह के विविध कार्यों से क्लांत होकर भी जन हितकारी कार्य के लिए विपुल परिश्रम करते थे। आपने अपने साधनाभ्यास से जो सिद्धिप्राप्त की थी, वह आपके मन की दृढ़ता तथा आलस्यहीनता का द्योतक है । आप सही अर्थ में उद्योगी पुरुष थे। किसी ने ठीक ही कहा है- 'नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः।' अर्थात् 'वीर्यवान् पुरुष ही आत्मज्ञान को प्राप्त करते हैं।'

दानापुर में सेवा करते समय ही गुरुदर्शन और दीक्षाप्राप्ति आपके जीवन की सर्वप्रधान आश्चर्यजनक घटना है। एक बार अचानक लाहिड़ी महाशय को नैनीताल के निकट रानीखेत नामक स्थान में जाने का सरकारी आदेश प्राप्त हुआ और वे नौकरी के उत्तरदायित्वों का पालन करते हुए बंधु-बांधवों की माया छोड़कर शीत-बहुल उत्तराखंड में हिमालय प्रांत में चले गए। उस नैनीताल या रानीखेत में आजकल की तरह आधुनिक सुविधा नहीं थी। वहाँ चारों तरफ वृक्ष गुल्माच्छादित अरण्य मात्र था। दूरवर्ती स्थानों में छोटी-छोटी कुटियों और पर्वत की गुफाओं में तपस्वी लोग निर्जन वास करते थे। वहाँ एक फौजी छावनी बनाने के उद्देश्य से सरकारी इंजीनियरिंग विभाग में कर्मचारी जमीन को समतल करने का उद्योग कर रहे थे। लाहिड़ी महाशय इसी काम के निरीक्षण के लिए वहाँ गये थे। वहाँ काम अधिक न था। निर्जन प्रदेश का सौंदर्य नित्य आपको अपनी ओर आकर्षित करता था। एक दिन किसी दिव्य प्रेरणा से आप टहलते हुए द्रोणगिरि तक चले गए जहाँ आपको अपने गुरुदेव के दर्शन हुए। आपके गुरुदेव ने एक गुफा में रखे कंबल-कमंडल-आसन आदि सामग्रियों को दिखाते हुए पूछा कि ''श्यामाचरण! क्या इन सामग्रियों को पहचान रहे हो? क्या मुझको भी बिल्कुल ही भूल गये।''

''नहीं महाराज! मैं तो आपको भी नहीं पहचान पा रहा हूँ। इधर देख रहा हूँ आप मेरा नाम तक जानते हैं।''

''मैं तुम्हें बहुत दिनों से जानता हूँ। एक विशेष कार्य के लिए तुम्हें दानापुर से यहाँ बुलाया है। कुछ दिनों बाद तुम्हें यहाँ से जाना पड़ेगा।''

गुरुदेव द्वारा जब आपके ललाट का स्पर्श किया गया तब आपका समस्त शरीर झनझना उठा और आपकी पूर्व स्मृतियाँ धीरे-धीरे जाग्रत होने लगीं। अतीत जन्म की सारी बातें याद आने लगीं। अब आपका चेहरा खिल उठा। आनंद के उच्छ्वास से मानो आपके शरीर और मन नाचने लगे। बहुत दिनों बाद फिर आपको अपने प्रेममय गुरु के दर्शन का आनंद लाभ प्राप्त हुआ। आपने उस अपरिचित व्यक्ति को साष्टांग प्रणाम करते हुए कहा-'अब पहचान गया, आप मेरे गुरुदेव हैं। यह गुफा मेरी साधना भूमि है। अज्ञान के लिए मुझे क्षमा करें।'

''पिछले चालीस वर्षों से मैं यहाँ तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा था। यहाँ से वापस जाने के बाद से मैं साये की तरह तुम्हारे पीछे लगा रहा। जन्म लेने के बाद से तुम पर मेरी दृष्टि रही। अब जाकर तुम मेरे पास आये हो। अब तुम्हारी शुद्धि होगी।...'' फिर आपकी दीक्षा हो गई। दीक्षा तो बहुतों की होती है, परंतु आपकी दीक्षा में एक अतुल्य विशेषता थी। उस दिन केवल आपकी दीक्षा नहीं हुई बल्कि आपके साथ आपके भावी शिष्यों के भी सौभाग्य सुप्रसन्न हो उठे तथा जगत् में साधन-सौभाग्य का द्वार उन्मुक्त हो गया। ''जाओ वत्स, आज तुम्हारी

सारी भौतिक इच्छाएँ सर्वदा के लिए शांत हो जाएँगी। ईश्वरीय राज्य की प्राप्ति के लिए दीक्षा ग्रहण करो।'' ... ''इस 19वीं शताब्दी में जिस क्रियायोग को मैं तुम्हारे द्वारा विश्व को दे रहा हूँ, वह उसी विज्ञान का पुनर्जीवन है जिसे सहस्राब्दियों पूर्व भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को प्रदान किया था। बाद में जिसका ज्ञान पतंजलि, ईसा मसीह, सेंट जान, सेंट पाल आदि उनके अनेक शिष्यों को प्राप्त हुआ था।'' ... ''श्यामाचरण, अब तुम अपनी गुफा में जाकर ध्यानस्थ हो जाओ।'' गुरुदेव के आदेशानुसार लाहिड़ी महाशय गुफा के भीतर जाकर कंबल पर बैठ गये। इस प्रकार यह क्रिया कई दिनों तक चलती रही। आठवें दिन गुरुदेव ने कहा- ''वत्स, अब मेरा कार्य पूरा हो गया। शीघ्र ही तुम्हें वहाँ जाना पड़ेगा। मैंने तुम्हारे हेड ऑफिस को प्रेरणा देकर इसी कार्य के लिए बुलाया था। अब अपनी भूल मालूम हो गई है, अतएव वे लोग तुम्हें शीघ्र तुम्हें अपने यहाँ वापस बुला लेंगे।''

इस बात को सुनकर लाहिड़ी महाशय व्याकुल हो उठे। ''गुरुदेव, अब मुझे वापस मत भेजिए। अपने चरणों की सेवा करने का अवसर दीजिए। मैं आपके सानिध्य में रहना चाहता हूँ।'' गुरुदेव ने कहा- ''नहीं वत्स, तुम्हें जाना ही होगा। संन्यासी के रूप में नहीं, बल्कि गृहस्थाश्रम में रहते हुए जन-कल्याण कार्य करना होगा। आगे चलकर अनेक लोग तुमसे दीक्षा ग्रहण करेंगे। तुम्हें देखकर लोग जान सकेंगे कि उच्चतर की साधना से गृहस्थ भी लाभ उठा सकते हैं। तुम्हें गृहस्थी से अलग होने की आवश्यकता नहीं है। तुम उस बंधन से मुक्त हो गये हो। यह याद रखना कि योग्य व्यक्ति को ही दीक्षा देना। ईश्वर प्राप्ति के लिए जो सर्वस्व त्याग कर सकता है, वही इस मार्ग के लिए योग्य है।''.....''अगणित लोग तुमसे क्रिया-योग की शिक्षा लेकर आध्यात्मिक शांति प्राप्त करेंगे।''...''क्रियायोग एक सरल मनःकायिक प्रणाली है जिसके द्वारा मानव-रक्त कार्बन से रहित तथा ऑक्सीजन से प्रपूरित हो जाता है। इस अतिरिक्त ऑक्सीजन के अणु जीवन-प्रवाह में रूपान्तरित होकर मस्तिष्क और मेरुदण्ड के चक्रों को नवशक्ति से पुनः पूरित कर देते हैं। अशुद्ध और नीले रक्त संचय को रोक कर योगी तंतुओं के अपक्षय को कम कर देने या रोक देने में समर्थ होता है। प्रगत योगी अपने कोशाणुओं को जीवन-शक्ति में रूपान्तरित कर सकता है। क्रिया-योग एक सुप्राचीन विज्ञान है। .... साधारण गति से जो आध्यात्मिकता एक वर्ष में प्रकट होती है, वह आधे मिनट के क्रिया-अभ्यास के समान होती है। .... क्रिया-योगी प्रज्ञापूर्वक आत्म-प्रचेष्टा द्वारा तीन वर्ष में वही परिणाम प्राप्त कर लेता है जिसे प्राकृतिक रूप से प्राप्त करने में दस लाख वर्ष लगते हैं। .... निश्चय ही क्रिया का संक्षिप्त मार्ग केवल अत्यंत विकसित योगियों द्वारा ही अपनाया जा सकता है। गुरु के मार्गदर्शन में ऐसे योगियों ने सावधानीपूर्वक अपने शरीर और मस्तिष्क को इस प्रकार तैयार किया है कि वे उग्र अभ्यास से उत्पन्न शक्ति को सहन कर सकें।'.....''लाहिड़ी महाशय ने इसे अपने महान गुरु बाबा जी से प्राप्त किया था। बाबाजी ने ही युगों-युगों की विस्मृति के अंतर गह्वर से 'क्रिया-योग' का पुनरुद्धार किया और इसकी प्रविधि को परिष्कृत किया। बाबाजी ने इसको 'क्रियायोग' सरल नाम दिया।''

लाहिड़ी महाशय केवल पुस्तकीय ज्ञानी नहीं थे, बल्कि चिंतन और तत्त्वज्ञान के झरने थे। आपके अनुसार ''ईश्वर की उपस्थिति का विश्वास ध्यान में रखते हुए अपने आनंदायक संपर्क से उन्हें जीतो। अगर तुम्हारी कोई समस्या हो तो क्रियायोग से हल करो। क्रियायोग के द्वारा तुम मुक्ति-पथ पर अनवरत रूप से आगे बढ़ते जाओ, क्योंकि इसकी शक्ति इसके अभ्यास पर निर्भर है। मैं स्वयं यह मानता हूँ कि मनुष्य के स्वतः प्रयास से मुक्ति पाने की सबसे अधिक प्रभावोत्पादक विधि यही है जिसकी उत्पत्ति मनुष्य द्वारा ईश्वर प्राप्ति के लिए अब तक पायी जाती है।''

आप अपने पूज्य गुरु को बाबाजी कहा करते थे । आपके अनुसार 'वे सिद्ध तथा अवतारी पुरुष है। बाबाजी ईसा मसीह के साथ संपर्क बनाये रहते थे। जब कोई व्यक्ति श्रद्धा के साथ बाबाजी के नाम का उच्चारण करता है तब उस पर तत्क्षण आध्यात्मिक आशीर्वाद की वर्षा होती है।'

रानीखेत से वापस आकर वे अपने कार्यालय में पूर्व की भाँति काम करने लगे। गुरु द्वारा बताई गई क्रियाओं की साधना भी चलती रही। इस प्रकार सन् 1880 तक सरकार की सेवा में रहने के बाद आपने अवकाश ग्रहण किया। मधुगंध से आकुल होकर भ्रमर जिस प्रकार पद्म पुष्प के चारों ओर गुंजन करते हैं, उसी प्रकार उनके पास दीक्षा प्राप्त करने के लिए नाना प्रकार के लोग झुंड के झुंड आने लगे। ब्राह्मण-क्षत्रिय से लेकर अस्पृश्य हिंदू, मुसलमान, अंग्रेज तथा राजा-महाराजा से लेकर पथ के भिखारी तक उनकी कृपा का लाभ पाने लगे।

सरकारी सेवा से अवकाश ग्रहण के बाद 15 वर्षों तक निरन्तर सर्वसाधारण में इस योगधर्म का प्रचार तथा जिज्ञासुओं के सन्देहों को दूर करते रहे। एक दिन आपने अपने भक्तों से कहा कि 'मेरा कार्य समाप्त हो गया, अब मैं अपने घर जा रहा हूँ।' क्रंदन करते अपने भक्तों को समझाया कि 'शोक करने की आवश्यकता नहीं है। नश्वर शरीर त्याग करने पर भी मैं तुम लोगों के बीच मौजूद रहूँगा।' 29 सितंबर, 1885ई0 में संवत् 1951 को श्रीशारदीया दुर्गापूजा की महाअष्टमी के संधि काल में आप महासमाधि में लीन हो गए। आपके देवदेह का अवसान हो गया। आपके पुत्रद्वय तथा अगणित भक्तवृंद आपको पद्मासन पर बैठाकर, आपकी पवित्र देह को पुष्पमालाचंदनादि से विभूषित करके मणिकर्णिका-घाट पर ले गये। चिता-शय्या पर शयन कराने के पहले जब आपको स्नान कराया जा रहा था, तब सभी लोक आपको जीवित समझकर आश्चर्यचकित हो गये थे।

आपने अपने जीवन के अंतिम 15वर्षों में अधिकांश समय ध्यान-मग्न अवस्था में ही बिताया। उस अद्भुत अवस्था का वर्णन करना अत्यंत कठिन है। श्रीमद्भगवद्गीता में योगी और भक्त के जिन लक्षणों का वर्णन है, वे सब लक्षण आपमें परिस्फुट-सा दीख पड़ते थे। आपकी बातचीत, वेशभूषा या आचार-व्यवहार में आडंबर का लेशमात्र भी न था। अहंकार या आत्मगगौरव की छाया भी आपको नहीं छू पायी थी। आप संन्यासी के साथ-साथ स्त्री-पुत्र परिवार के साथ गृहस्थ थे, जीविका के लिए सतत कर्मरत रहते थे पर पद्मपत्रस्थ जल के समान पूर्ण निर्लिप्त थे। आप ऐसे सुमधुर

विनय-वचन के द्वारा अपने को निरंतर आवृत रखते थे कि लोगों को आपके महत्त्व या अपूर्व योगैश्वर्य का कोई संधान ही नहीं मिलता था। अपूर्व योग-प्रतिभा से मुग्ध होकर आपको गृहस्थ जानकर भी बहुत से दंडी, परमहंस, संन्यासी, बह्मचारी आदि आपसे दीक्षा प्राप्त कर कृतार्थ होते थे। आपने सिद्ध कर दिया कि कलियुग के प्रचंड प्रभाव में भी साधन किया जा सकता है और उससे सिद्धि प्राप्त करना असंभव नहीं है। आपकी साधन-प्रणाली की सुव्यवस्था किसी भी साधक को निराश नहीं करती। सामान्य इच्छा और चेष्टा रहने पर भी साधनाभ्यास प्रारंभ किया जा सकता है। योगमार्ग दुरूह है, इसमें कोई संदेह नहीं है। सबको इस मार्ग में प्रवेश का अधिकार नहीं है, यह भी सत्य है, तथापि योगपथ के बिना शास्त्रों के दुर्गम रहस्य का भेद पाना असंभव है। आपने योगविद्या को नाना श्रेणियों में विभक्त कर सर्वसाधारण के लिए उपयोगी बनाया जिससे सब श्रेणियों क लोग थोड़ा-बहुत इस पथ में प्रविष्ट होकर जगत् के गूढ़ रहस्यों को जान सके।

आपके जीवन से जुड़ी अनेक दिव्य अलौकिक घटनाएँ हैं, कुछ घटनाओं की चर्चा यहाँ अपेक्षित प्रतीत होती है। वैसे तो जितने मुँह उतनी बातें सुनने को मिलती हैं लेकिन जो-जो बातें लगभग उनके सभी भक्तों को स्वीकार हैं उनमें में से कुछेक की चर्चा कर रहा हूँ-

1. एक दिन दो-चार भक्तों के साथ तैलंग स्वामी का दर्शन करने के लिए योगिराज पंचगंगा घाट स्थित उनके स्थान तक आये। दूर से उन्हें आते देख तैलंग स्वामी ने आगे बढ़कर गले से लगाया और फिर अपने स्थान तक ले आये। उन दिनों काशी में तैलंग स्वामी को जीवंत तथा चलंत विश्वनाथ माना जाता था। कुछ देर तक दोनों संतों में बातें होते रहीं। इसके बाद योगिराज विदा लेकर वापस चले गये। लाहिड़ी महाशय के जाने के बाद वहाँ बैठे भक्तों में से किसी ने पूछा कि 'महाराज, आप जैसे महान् योगी ने कैसे एक गृहस्थ व्यक्ति का स्वागत किया, मैं समझ नहीं सका। आदर-स्वागत तो बराबरी वालों का किया जाता है।'

तैलंग स्वामी ने बताया कि 'यह साधारण व्यक्ति नहीं है बल्कि असाधारण योगी है और उच्चकोटि का है। गृहस्थ होते हुए भी काफी उन्नत हो गया है। तुम लोगों की दृष्टि वहाँ तक नहीं पहुँच पाती।' विश्वनाथ स्वरूप तैलंग स्वामी द्वारा प्रशंसा किये जाने के कारण लाहिड़ी महाशय की ख्याति चतुर्दिक् फैल गयी। जो लोग इन्हें साधारण समझते रहे अब वे भी इनके दर्शन का लाभ उठाने लगे।

पुरी में लाहिड़ी महाशय के नाम पर मंदिर बनवाने वाले श्रीभूपेंद्र सान्याल को योगिराज के यहाँ बिना गये दीक्षा प्राप्त हुई थी। वे काशी जाकर दीक्षा लेने में असमर्थ थे, इसलिए मन ही मन आध्यात्मिक दीक्षा के लिए उन्होंने प्रार्थना की। एक दिन रात को जब वे गहरी नींद में थे, तब उनके स्वप्न में लाहिड़ी महाशयजी आये और दीक्षा देकर चले गये। सान्याल महाशय की दृष्टि में यह मात्र स्वप्न था। प्रत्यक्ष रूप में उन्हें दीक्षा नहीं मिली थी। फलतः काफी दिनों बाद जब वे काशी आये तब उन्होंने योगिराज से प्रत्यक्ष रूप से उन्हें दीक्षा देने के लिए प्रार्थना की। योगिराज ने कहा कि 'मैं तुम्हें दीक्षा काफी पहले दे चुका हूँ। अब दीक्षा कैसी!'

लाहिड़ी महाशय साथ नित्य उनका एक भक्त कृष्णराम गंगा-स्नान के लिए जाता था। एक दिन बीच रास्ते में रुककर योगिराज ने कहा- 'कृष्णराम, कपड़ा फाड़।' बेचारा कृष्णराम कुछ समझ नहीं सका। 'कपड़ा फाड़' अभी यह क्या बला है? गुरुजी को अचानक क्या हो गया? वह ऊहापोह की स्थिति में ही था कि ऊपर से ईट लाहिड़ी महाशय के पैर पर गिरी और पैर घायल हो गया। तुरंत अपनी ध ोती फाड़कर कृष्णराम ने क्षत पर पट्टी बाँधते हुए कहा-'गुरुदेव, जब आपको यह मालूम हो गया था कि ऊपर से ईट गिरनेवाली है तब जरा हट-बढ़ जाते। जान-बूझकर घायल होने से क्या मिला?' योगिराज ने कहा-'ऐसा नहीं होता, बेटा। अगर हट जाता तो यह भोग आगे भयंकर रूप में आता। इसलिए प्रारब्ध का भोगदंड तुरंत स्वीकार कर लेना चाहिए।'

योगिराज कभी-कभी अपने भक्तों से विनोद भी करते थे। एकाध घटनाओं की चर्चा यहाँ अपेक्षित हैं-

चंद्रशेखर दे नामक एक युवक डॉक्टर की डिग्री प्राप्त करने के बाद योगिराज से आशीर्वाद लेने आया। इधर-उधर की बातें करने के बाद योगिराज ने पूछा कि 'तुम लोगों के विज्ञान में मृत किसे कहा जाता है?' चंद्रमोहन ने कहा-'जिसकी नाड़ी बंद हो जाती है।' योगिराज ने अपना हाथ बढ़ाते हुए कहा-'लो, मेरी नाड़ी की परीक्षा करके देखो और बताओ कि मैं मृत हूँ या जीवित?' चंद्रमोहन नाड़ी जाँच करने के बाद दिल की धड़कन की भी जाँच की। उसके चेहरे की हवाइयाँ उड़ने लगीं। वह यह क्या देख रहा है। उसने लाहिड़ीजी की ओर देखते हुए कहा-'यह तो गजब का चमत्कार है।' 'तब मुझे डेथ सर्टिफिकेट लिख दो।' 'मुझे लिखने में कोई एतराज नहीं है, पर आप बातचीत जो कर रहे हैं।' कहकर वह हँस पड़ा।

इनके एक शिष्य कालीकुमार राय की इच्छा हुई कि गुरुदेव के साथ एक सामूहिक फोटो खींचा जाय। योगिराज को बीच में बैठाकर एक फोटो खींचा गया। निगेटिव धुलने पर देखा गया कि फोटो में सभी लोग हैं केवल योगिराज नहीं हैं। इसी प्रकार अन्य फोटोग्राफर आया। उसने भी एक के बाद एक करके बारह फोटो लिये। इन्हें भी असफता मिली। योगिराज के चमत्कारों से घबराकर उसने उसके पैर पकड़ लिये। रोते हुए कहा 'प्रभु, इस अकिंचन को अपना एक चित्र लेने दीजिए।' योगिराज ने कहा-' ठीक है कल सबेरे आना।' दूसरे दिन लाहिड़ी महाशय ने जो चित्र खिंचवाया, वहीं एकमात्र चित्र है जो सर्वजन सुलभ हो सका।

सारतः कहा जा सकता है कि जिन लोगों को ब्रह्मसारूप्य के सुख का अनुभव प्राप्त हो जाता है, वे लोग शरीरधारी होते हुए भी ब्रह्मरूप हो जाते हैं। ऐसे लोगों के लिए विभूतियाँ प्रकट करना साधारण-सी बात होती है।

❖

अष्टावक्रगीता

(द्वितीय प्रकरण)

हिन्दी पद्यानुवाद - डॉ. उमाशंकर सिंह

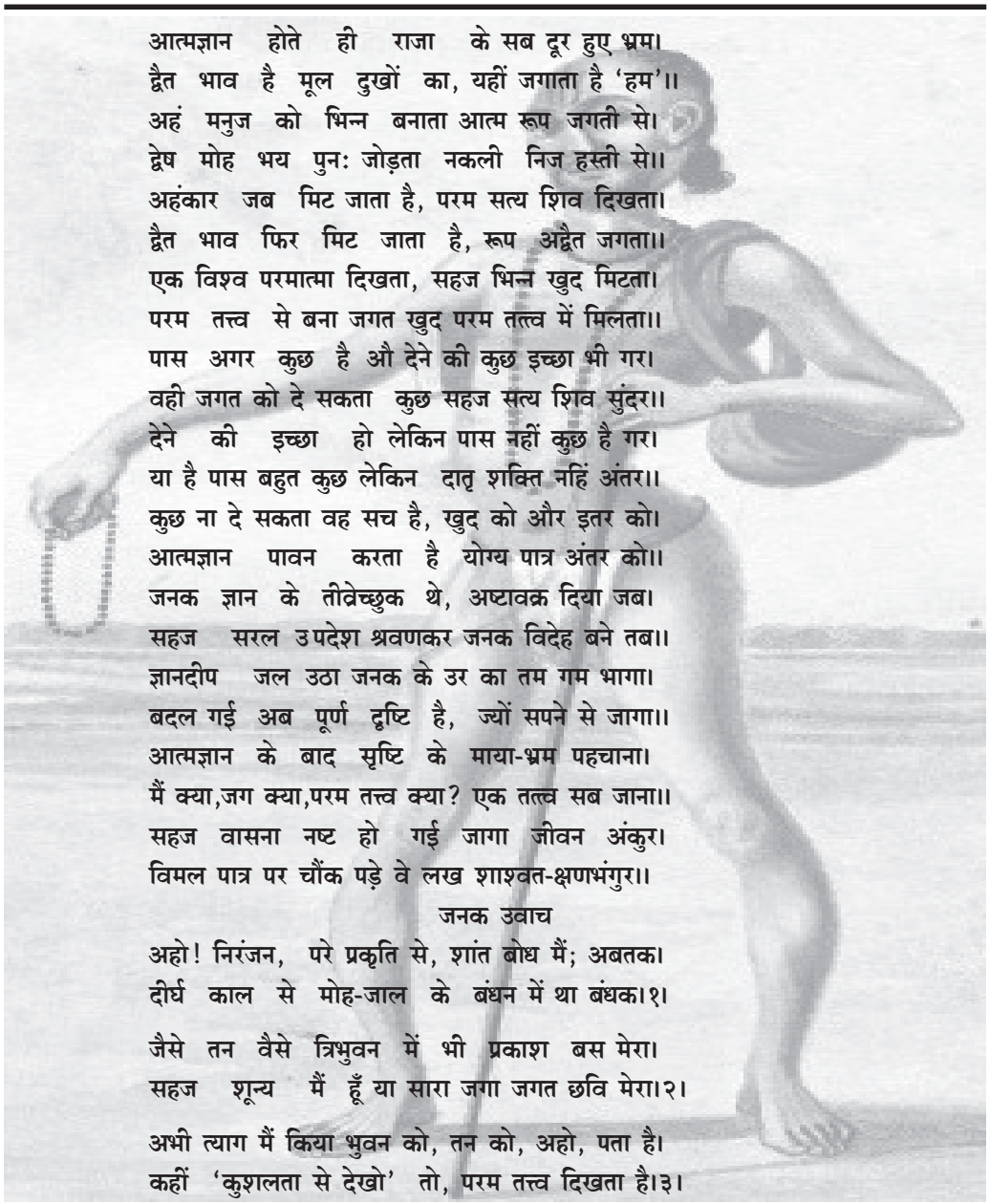

आत्मज्ञान होते ही राजा के सब दूर हुए भ्रम।
द्वैत भाव है मूल दुखों का, यहीं जगाता है 'हम'।।
अहं मनुज को भिन्न बनाता आत्म रूप जगती से।
द्वेष मोह भय पुनः जोड़ता नकली निज हस्ती से।।
अहंकार जब मिट जाता है, परम सत्य शिव दिखता।
द्वैत भाव फिर मिट जाता है, रूप अद्वैत जगता।।
एक विश्व परमात्मा दिखता, सहज भिन्न खुद मिटता।
परम तत्त्व से बना जगत खुद परम तत्त्व में मिलता।।
पास अगर कुछ है औ देने की कुछ इच्छा भी गर।
वही जगत को दे सकता कुछ सहज सत्य शिव सुंदर।।
देने की इच्छा हो लेकिन पास नहीं कुछ है गर।
या है पास बहुत कुछ लेकिन दातृ शक्ति नहिं अंतर।।
कुछ ना दे सकता वह सच है, खुद को और इतर को।
आत्मज्ञान पावन करता है योग्य पात्र अंतर को।।
जनक ज्ञान के तीव्रेच्छुक थे, अष्टावक्र दिया जब।
सहज सरल उपदेश श्रवणकर जनक विदेह बने तब।।
ज्ञानदीप जल उठा जनक के उर का तम गम भागा।
बदल गई अब पूर्ण दृष्टि है, ज्यों सपने से जागा।।
आत्मज्ञान के बाद सृष्टि के माया-भ्रम पहचाना।
मैं क्या,जग क्या,परम तत्त्व क्या? एक तत्त्व सब जाना।।
सहज वासना नष्ट हो गई जागा जीवन अंकुर।
विमल पात्र पर चौंक पड़े वे लख शाश्वत-क्षणभंगुर।।

जनक उवाच

अहो! निरंजन, परे प्रकृति से, शांत बोध मैं; अबतक।
दीर्घ काल से मोह-जाल के बंधन में था बंधक।१।

जैसे तन वैसे त्रिभुवन में भी प्रकाश बस मेरा।
सहज शून्य मैं हूँ या सारा जगा जगत छवि मेरा।२।

अभी त्याग मैं किया भुवन को, तन को, अहो, पता है।
कहीं 'कुशलता से देखो' तो, परम तत्त्व दिखता है।३।

फेन, बुलबुला तरंग जल से भिन्न नहीं है जैसे।
आत्मविष्ट है, अभिन्न जग से, आत्म तत्त्व है वैसे।४।

विचारने पर लगता कपड़ा तंतु मात्र है जैसे।
आत्म तत्त्व ही प्रतीत ज्योतित, सकल विश्व में वैसे।५।

प्रतीत होता गन्ना-रस में व्याप्त खाड़ है जैसे।
बना हुआ मुझसे ही, मुझमें व्याप्त जगत है वैसे।६।

रज्जु सर्पवत् भासित तब जब उसका ज्ञान नहीं है।
आत्मज्ञान जग असत्, ज्ञान बिन लगता जगत सही है।७।

मेरा अपना रूप ज्योति है अलग नहीं मैं उससे।
सकल जगत् ज्योतित दिखता जो, पाता प्रकाश मुझसे।८।

अहो विकल्पित, ज्ञान रहित जग प्रतीत होता वैसे।
रज्जु सर्प सम, सीप रौप्य सम, रविकर जल सम जैसे।९।

जल में लहर, मृदा घट, भूषण कनक विलय है जैसे।
मुझसे होकर प्रकट, विलय जग मुझमें होता वैसे।१०।

करूँ नमन मैं खुद को, मेरा होता नाश नहीं है।
ब्रह्मा से लेकर तृण-तृण का होता नाश, सही है।११।

मैं अभेद हूँ देहवान भी, अहो नमन खुद अर्पित।
कहीं न आता जाता व्यापक, आच्छादित जग सुस्थित।१२।

अहो, न कोई दक्ष स्वयं सम, स्वयं नमन उच्चारण।
परस किए बिन तन करता हूँ सकल जगत चिर धारण।१३।

नमन करूँ मैं खुद को केवल ना कुछ भी मेरा है,
या मन वाणी की अति गति तक जो कुछ सब मेरा है।१४।

ज्ञान, ज्ञेय और ज्ञाता तीनों वास्तव नहीं; सही मैं।
ज्ञान बिना भासित लगता, गत माया रूप वहीं मैं।१५।

द्वैत मूल है अहो, दुःख का अन्य न कोई औषध।
सब मिथ्या जो दिखता, चिद्रूप, शुद्ध एक मैं ना अध।१६।

बोधमात्र मैं, मुझसे कल्पित उपाधि नाम रहित है।
निर्विकल्प अस्तित्व हमारा नित्य सुचिंत्य रहित है।१७।

मुझमें प्रस्थित विश्व असल में प्रस्थित नहीं, गगन है।
शांत हो गई भ्रांति निराश्रय, रहित मोक्ष-बंधन है।१८।

शरीर युत यह जगत नहीं कुछ, नहीं सदासत् निश्चित।
मात्र चेतना शुद्धात्मा वह किसमें होगा कल्पित।१९।

स्वर्ग-नरक भय, बंध-मुक्ति तन मात्र कल्पना ही है।
आत्म रूप मेरे चेतन का इससे कार्य नहीं है।२०।

अज्ञानी तन में जीता है औ तन में मरता है।
अहंकारवश कर्ता-भोक्ता मान स्वयं जलता है।।
आत्म रूप बिन जाने, लेना पड़ता जन्म निरंतर।
मृत्यु-बंध में फँसता, पाता स्वर्ग नरक भय अंतर।।
जन समूह भी वन सम दिखता सब लगता ज्यों किस्से।
द्वैत दिखाई नहीं दे रहा मोह करूँ फिर किससे।२१।

भाव जगा जब विश्वबंधुता का तब सब कुछ बदला।
सकल आत्मवत् दिया दिखाई, मिटा अंत सह पहला।।
सकल भेदकर भेद जगा उर, एक सत्य अगजग है।
बदल गई अब दृष्टि हमारी, सारा जग जगमग है।।
ना मैं तन ना तन मेरा है, जीव नहीं हूँ चेतन।
जीनें की इच्छा जो मेरी थी, था मेरा बंधन।२२।

जीने की इच्छा ही सबसे बड़ी वासना होती।
चाह-वासना सकल जीव तन-धारण कारण बनती।।
जीने की इच्छा मिटते ही जीव मुक्त होता है।
स्वाभाविक जीवन चलता पर आग्रह नहिं रहता है।।
विकृत प्रकृत को जो करता या नष्ट स्वयं को करता।
मिलती सजा नियम तजने का, धर्म पाप है कहता।।
अगाध सागर लहर सृष्टि है विचित्र चित्रित करती।
चित्त वायु के झोके से जो उठती गिरती रहती।२२।

भिन्न नहीं कुछ, अभिन्न है वह, नव नव रूप बदलती।
चित्त-वृत्ति गर सहज हुई तो सारी दुनिया मिटती।।
विकल चित्त में काम क्रोध मद घृणा वासना जगती।
आत्मजलधि से भिन्न नहीं है, लहर रूप यह जगती।।
निर्विकार है क्षोभ रहित है, शांत आत्म सागर है।
चित्त हवा बिन, मुझ सागर में बनती नहीं लहर है।२३।

फिर कुछ काम न कर पाती है, जग नौका मिटता है।
जीव रूप व्यापारी का तो अभाग्य फिर जगता है।।
मुझ अनंत सागर में उठती, गिरती औ टकराती।
जीव-तरंगें खेल खेलकर स्वभावत: मिट जाती।२५।

निज स्वरूप को जान गया मैं, गुरु महिमा फल पाया।
तरंग-सागर, आत्म-जीव का भेद सहज मुरझाया।।

❖

जल ही जीवन है

❑ ओम प्रकाश सिंह

'संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट' (2016) के अनुसार 2025 तक यानी 9 वर्ष बाद पूरे विश्व में 'जल संकट' हो जायेगा। 'ग्लोबल रिस्क रिपोर्ट' (2016) में विश्व आर्थिक मंच ने 'जल-संकट' को सबसे बड़े वैश्विक खतरे के रूप में सूचीबद्ध किया है। 'विश्व बैंक' की हाल की एक रिर्पोट इस बात की पुष्टि करती है कि 'जल' की मांग तो पहले से ही बढ़ रही है, लेकिन 'जलवायु परिवर्तन' 'जल संकट' को और भी बढ़ा देगी। इसी सामायिक विषय 'जल पर' वरिष्ठ पत्रकार ओम प्रकाश सिन्हा की विशेष रिसर्च (आलेख)

इस रिर्पोट में प्राचीन धार्मिक ग्रंथों का भी उल्लेख है।

हमारा भविष्य तभी सुरक्षित होगा, जब जल होगा, किन्तु मानव इस प्रकृति-प्रदत्त बहुमूल्य संसाधन का निर्दयता से दुरूपयोग कर रहा है। प्रत्येक व्यक्ति को यह भान कराने के लिए आवाज उठाने का समय आ गया है कि जलचक्र और 'जीवनचक्र' एक ही है। आज से हम संकल्प लें कि जल की एक-एक बूंद बचाएं और इस अमूल्य संसाधन का संरक्षण करें।

सबको यह मालूम है कि धरती पर जीवन के लिए जल कितना अपरिहार्य है। प्राचीन धारणा थी कि ब्रह्माण्ड पाँच मूल तत्त्वों क्षिति (पृथ्वी), जल, तेज (प्रकाश/उष्मा), पवन (वायु) और व्योम (आकाश) अंतरिक्ष से मिलकर बना है। 'ऋग्वेद' के अनुसार जीवन जल से ही निकला है। शुद्ध जल को शीतल (ठंढा होना) शुचि (स्वच्छता), शिखम (उपयोगी पोषक एवं तत्त्वों से युक्त) स्थान (पारदर्शी) तथा विमवम् लहू षड्गुणम् (अगलता का संतुलन सामान्य सीमा के अधिक न हो) के गुणों के कारण 'दिव्य जल' कहा जाता था। इसके अतिरिक्त जल के 'औषधीय गुणों' के भी अनेक उल्लेख हैं। धरती की दो तिहाई सतह जल से आवृत होने के कारण और मानव शरीर में 75 प्रतिशत जल होने के कारण यह स्पष्ट है कि जल धरती पर जीवन के लिए उत्तरदायी प्रमुख तत्त्वों में से एक है। मानवता के आरंभ से ही सभ्यताओं की उत्पति जल के कारण हुई है। जल ने ही लोगों के निवास स्थान को प्रभावित किया क्योंकि हमारे पूर्वजों ने 'कृषि के कारण' जल के आसपास ही छोटे-छोटे 'नगर' बसाये। जल-जैसा इस अनमोल संसाधन अब हमारी अर्थव्यवस्था के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण हो गया है। यह कृषि, उद्योग, परिवहन के लिए ही नहीं बल्कि. मनोरंजन एवं पर्यावरण के लिए भी महत्त्वपूर्ण घटक है। किन्तु अतीत के विपरीत आधुनिक समाज जीवन के इस चमत्कार के प्रति संवेदनशील हो गया है। जिससे विश्व के लगभग प्रत्येक भाग में जल दुर्लभ होता

जा रहा है। गांवों में ग्रामवासीयों का बहुमूल्य समय परिवार के लिए जल ढूंढ़ने में बरवाद हो रहा है। शहरी क्षेत्र में भी जल के लिए अक्सर विवाद भी हो रहे हैं। सूखे के समय जल की भीषण किल्लत से कृषि एवं किसानों के कल्याण पर प्रभाव पड़ता है, जिससे कृषि उत्पादन बरवाद होता है और वेबस किसान आत्महत्या भी (कई राज्यों में) कर लेते हैं।

बाढ़ के समय जल की अधिकता के कारण भी वर्षो से जान-माल की बहुत क्षति होती आ रही है। यह दोहरी मार हमारी अर्थव्यवस्था भी नियति बन गई है। स्थिति की गंभीरता को समझते हुए विशेषज्ञ जल संरक्षण के नए तरीके तलाशने में जुटे हैं। जागरूकता अभियानों के द्वारा किसानों को सिंचाई की बेहतर प्रणालियों से अवगत कराया गया है। सम्प्रति संकट के लिए जल-संचयन एवं बाढ़ के पानी के प्रबधन जैसे जल-संरक्षण के तरीकों का पूरे देश में जोर-शोर के प्रचार किया जा रहा है। बड़े स्तर पर नदियों को आपस में जोड़ना लाभकारी हो सकता है, जिससे पारितंत्र को छेड़े वगैर कुछ नदियों में मौजूद आवश्यकता से अधिक जल को दूसरे क्षेत्रों में सूखी नदियों तक पहुंचाया जा सकता है, प्रमुख नदियों पर बन्द बांध बाढ़ आने पर अधिक जल को रोक सकते हैं। जिसका उपयेाग सिंचाई, बिजली उत्पादन एवं कई अन्य उद्देश्यों हेतु हो सकता है।

ग्लोबल रिस्क रिपोर्ट, 2016 में विश्व आर्थिक मंच, 2016 ने प्रभावकारिता के स्तर पर 'जल-संकट' को सबसे बड़े वैश्विक खतरे के रूप में सूचीबद्ध किया है। जल-संकट के विभिन्न आयाम हैं, जिनमें भौतिक, आर्थिक एवं जल की गुणवत्ता से संबंधित आदि प्रमुख हैं। आबादी का बढ़ता दवाब, बड़े पैमाने पर शहरी करण, बढ़ती आर्थिक गतिविधियाँ उपयोग की बदलती प्रवृतियाँ, रहन-सहन के स्तर में सुधार, सिंचित कृषि का विस्तार एवं अधिक जल की माँग करनेवाली फसलों की पैदावार आदि से जल की मांग का दायरा बढ़ा है। पिछले कुछ दशक में स्वच्छ पेयजल की बढ़ती माँग एवं इसको मालिक एवं स्थानीय उपलब्धता जल-संकट के प्रमुख कारकों में से है। जल संकट का उद्गम एक तरह से स्वच्छ पेयजल की मांग एवं उपलब्धता के भौगोलिक एवं स्थानिक असमानता के रूप में देखा जा रहा है। जल संकट का प्रभाव सामाजिक, पर्यावरणीय एवं आर्थिक प्रभाव के रूप में सामने आ रहा है। जल की कमी के कारण आज दुनिया के सामने कई खतरे मँडरा रहे हैं, जिनका असर विश्वशांति, न्याय एवं सुरक्षा पर पड़ सकता है। जल की किल्लत से सामाजिक आर्थिक वृद्धि प्रभावित होती है। विश्व आर्थिक मंच वैश्विक जोखिम रिर्पोट 2016 में जल-संकट के सबसे अधिक प्रभाव डालनेवाले दस खतरों में तीसरा खतरा बताया गया है। विश्व बैंक की हाल की एक रिर्पोट इस बात की पुष्टि करती है कि पानी की माँग तो पहले से ही बढ़ रही है, लेकिन जलवायु परिवर्तन जल-संकट को और भी बढ़ा देगा। उदाहरणार्थ, पश्चिम बंगाल के फरक्का में पानी की कमी के कारण बिजली का उत्पादन बाधित हुआ है। विभिन्न राज्यों में जल की कमी के कारण फसल बरबाद हुई है, लोगों के झुंड का पलायन करना पड़ा है। भारत में 14 बड़ी, 55 सामान्य और 700 छोटी नदियाँ है। हर वर्ष औसतन 1,170 मिलीमीटर वर्षा होती है और हर जगह वर्षा जल संरक्षण की

परम्परा रही है। यहाँ समस्या का कारण जल की वास्तविक किल्लत कम है और जल का दुप्रर्वधन अधिक है। जल संकट से निपटने के लिए महत्वपूर्ण उपाय किए जा सकते हें, जैसे

क) गांवों में सूखा राहत समितियों का गठन।

ख) आत्महत्याएं रोकने का संकल्प।

ग) पेयजल की किल्लत वाले क्षेत्रों में जल की टैकरों से जलपूर्ति करना।

घ) पशुओं के शिविरों में उनके लिए जल तथा चारे की व्यवस्था करना।

भारत जल और भूमि संसाधनों से सम्पन्न देश है। विश्व में भारत की भूमि 25 प्रतिशत है। जल संसाधन वैश्विक उपलब्धता का 4 प्रतिशत है और जनसंख्या 17 प्रतिशत है। उपलब्ध क्षेत्र 162 मिलियन हेक्टेयर है, जो दुनिया में दूसरा सबसे अधिक क्षेत्र है, उसी तरह जैसे भारत का स्थान जनसंख्या के मामले में भी दुनियां में दूसरा है। नब्बे के दशक में भारत में 65 प्रतिशत किसान और कृषि मजदूर थे जिसमें स्पष्ट होता है कि हमारा देश कृषि यानि जमीन और जल पर निर्भर रहा है। इसलिए इस बात को शुरूआत से ही माना जाता रहा है कि देश के सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए जल संसाधनों का विकास अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारत बहुत बड़े जल संकट से जुझ रहा है। देश के 50 प्रतिशत से अधिक जिलों में सूखे का प्रभाव चिह्नित किया गया है। पूरे हमारे देश में लगभग 33 करोड़ लोगों को प्रभावित करने वाले इस जल संकट ने देश को इस विकट स्थिति का हरसंभव हल तलाशने के लिए एक सूत्र में बाँध दिया है। भारतीय वाङ्मय सबसे ज्यादा चर्चित इंद्र है। क्या यह महा संयोग है कि इंद्र को वर्षा का देवता भी माना गया है? साहित्य से लेकर परम्पराओं तक भारतीय मनीषियों ने जल और जीवन के तारतम्य के बखूबी समझा और समाधा है। हड़प्पा काल से लेकर मुगल काल तक जल को संग्रहित करने और उसके बेहतर उपयोग के लिए एक से बढ़कर एक तरकीये विकसित कि गई और इनमें से अनेक अब भी हमारे बीच मौजूद हैं। वेदों में भी वर्णन है। यथा-

''आपो मयि धेहि ॐ सीर्घाम्नोः धाम्मो राजस्तो वरुण नो मुंच।'' (यजुर्वेद 6/22) अर्थात् हे राजन् आप अपने राज्य के स्थानों में जल और वनपतियों को हानि न पहुँचाओं, ऐसा उधम करो, जिसमें हम सभी को जल एवं वनपतियों सत रूप से प्राप्त होती रहे। उपरोक्त श्लोक का मंत्र अनेक मांगों में एक है, जिनमें जल संरक्षण एवं जल की महता की बात की गई है।

'वैदिक साहित्य' में जल स्त्रोतों, जल के महत्व उसकी गुणवता एवं संरक्षण की बात बराबर की गई है। जल की औषधीय गुणों की चर्चा आयुर्वेद जो एक बेदाग है) के अतिरिक्त 'ऋग्वेद एवं अर्थववेद' में भी मिलती है। जल का वर्गीकरण आचार्य वाग्यमय ने किया है, वर्षा जल, प्रदूषित जल समुद्री जल, गर्म जल एवं नारियल पानी। महान आयुर्वेदाचार्य सुरपाल ने लिखा है- दम कुंए एक तालाब के बराबर होता है। जबकि दस तालाब एक झील के बारे में दस झीलें एक पुत्र के एवं दस पुत्र एक पेर के भारत है। भारत में जल संरक्षण का एक बेहतरीन इतिहास है। वहां जल संरक्षण की एक मूल्यकन, पारंपरिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परम्परा है। उदाहरण स्वरूप नदी,

तालाब, जोहड़, कुंआ इत्यादि देश के अलग-अलग हिस्सों में इनमें से अलग-अलग तरीकों को अपनाया गया जो वहां के जलवायु के उपयुक्त है। कौटिलय, जिसका दूसरा नाम चाणक्य भी था, उसने अपने अर्थशास्त्र में जल प्रबंधन की विस्तृत चर्चा है। इसमें वर्षा मापन के लिए प्राण नामक यंत्र की चर्चा भी है। सुश्रुत संहिता का 45वें अध्याय पेयजल पर है। उन्होंने जल को दो प्रकार में विभक्त किया गंगा (शुद्ध) एवं समुद्र (अशुद्ध)। प्राचीन काल से लेकर 19वीं शताब्दी तक देश के विभिन्न भागों में जल संरक्षण के विभिन्न संरचनाओं का उपचारों किया गया, इनका निर्माण एवं पुनर्निर्माण भी हुआ।

अब थोड़ी चर्चा कर लें (पानी की बोतल के बहाने जल के उपयोग की) कोई बड़ा शहर सबसे पानी की बोतलों का करोबार फल-फूल रहा है। कुछ दशक पहले तक बोतलबंद पानी का इस्तेमाल एक छोटा और अमीर कहलाने वाला तबका ही करता था फिर विदेश से आनेवाले सैलानी पानी की बोतलें मांगते थे, लेकिन अब शहरो में ही नहीं देहातों में भी सफर के दौरान था दुकानों पर पानी की बोतलें बहुत आराम से मिल जाती है।

जल के इस अर्थशास्त्र में बहुत बड़ा हिस्सा ऐसे ही उद्योग का है। जिनके लिए पानी प्राणवायु से कम नहीं है। इस अर्थशास्त्र का दूसरा देखते हैं। जिस पर ध्यान कम ही दिया जाता है। यह हिस्सा से सिक्के बनाने के कारोबार का है, जिसमें बोतलबंद पानी भी आता है, पानी को साफ करने वाले वाटर प्योरिफायर भी है। और गंदे पानी की साफ करने यानि वेस्टवाटर का करोबार भी है। इस करोबार का बड़ा हिस्सा असंगठित है, लेकिन अरबों रुपयों से कम का नहीं है। 20 या 40 लीटर की बड़ी बोतलें शहरी घरों में जगह बनाने लगी है। बिजली जैसे बड़े ब्रांड 20 लीटर जल की बोतल 70-80 रुपये में बेचते हैं। एक रिपोर्ट पैकेड वॉटल्ड वाटर इंडस्ट्री इन इंडिया 2013-14 में कहा गया है कि लगातार बढ़ रहा भारतीय बोतलबंद जल का बाजार 2013 में करीब 6000 करोड़ रुपये का था, जो 22 फीसदी सालाना की रफ्तार से बढ़कर 2018 में 16,000 करोड़ रुपये तक पहुंच सकता है। सरकारी आंकड़ों बताते है कि भारद (देश में) में रोजाना 620 करोड़ लीटर गंदा जल कारखाना से नदियों में मिल जाता है। सरकारी आकड़े के अनुसार वर्ष 2011 से 2030 के बीच भारत के जल के क्षेत्र में 13,000 करोड़ डॉलर निवेश करने होगें। इनमें भी निवेश गंदे जल को साफ करने में होगा। फिलहाल महज 60 प्रतिशत औद्योगिक जल और 26 प्रतिशत घरेलू जल को साफ किया जाता है।

आप सभी को यह जानकर हैरत होगी कि जल का सबसे अधिक इस्तेमाल कोयले से बिजली बनाने में होती है। अलग-अलग अध्ययनों एवं शोध से पता चला कि सबसे ज्यादा बिजली भी ताप बिजली सयंत्रों से ही बनाई जा रही है। इसका मतलब है कि हम जो बिजली रोज इस्तेमाल करते हैं, उसे बनाने में सबसे ज्यादा जल की जरूरत पड़ती है। रिर्पोट में बताया गया है कि जितना पानी वहाँ बिजली बनाने में इस्तेमाल होता है, उससे करीब 5 करोड़ लोगों की प्यास पूरे साल बुझ सकती है। यही वजह है कि एन.टी.पी.सी. के कई इकाईयों बंद जल की कमी के कारण

करनी पड़ी है। इस्पात उद्योग पर नजर डालें तो केवल 1 टन इस्पात बनाने के लिए 7000 से 10000 लीटर जल की जरूरत पड़ती है। 1 टन कागज तो 75000 से 1 लाख लीटर जल ले लेता है। 1 मेगावाट प्रति घंटा बिजली बनाने के लिए भी 3000 से 5000 लीटर जल की जरूरत पड़ती है। 1 लीटर कोका कोला या पेरसी आदि बनाने के लिए 3 से 5 लीटर जल इस्तेमाल किया जाता है। अगर 1000 मेगावाट का कोयले से बिजली बनाने का संयत्र लगाया जाता है, तो सालभर में वह करीब 2800 करोड़ लीटर पानी खर्च कर देता है। हालांकि ज्यादतर उद्योगों में जल का इस्तेमाल गर्म हो चुकी मशीनों को ढंडा करने में ही होता है। उद्योग अवसर रिसारकल किए गए जल यानी गंदे जल का शोधन करने के लिए तैयार जल का इस्तेमाल करते हैं। लेकिन कागज, सीतल पेय जैसे कुछ उद्योगों के एकदम ताजे और साफ जल की ही जरूरत होती है।

मजेदार एवं दिलचस्प आँकड़ा आया है। मार्च में विश्व जल विश्व पर जारी संयुक्त राष्ट्र विश्व जल विकास रिपोर्ट 2016 बताती है कि जल नहीं तो मान नहीं। इस रिर्पोट के अनुसार विश्व के कुल रोजगार में से 2.6 अरब (260 करोड़) रोजगार जल पर निर्भर हैं। इनमें 1.4 अरब (140 करोड़) से अधिक रोजगार तो पूरी तरह जल पर निर्भर हैं। इस आँकड़े को हम यदि कुल कार्य शक्ति के रूप में देखें तो पता लगता है कि विश्व को कुल कर्य शक्ति का 42 प्रतिशत पूरी तरह जल पर निर्भर है। जबकि 1.2 अरब यानि 120 करोड़ रोजगार सामान्य रूप से जल पर निर्भर हैं। ये वे रोजगार हैं, जिनमें जल की बहुत अधिक आवश्यकता नहीं होती लेकिन जल के बिना इनका चलना भी अत्यंत कठिन है। इन 1.2 अरब रोजगार में कुल कार्य शक्ति का लगभग 36 प्रतिशत संख्या है। रिर्पोट यह भी बताती है कि बुनियादी तौर पर वैश्विक कार्यशक्ति के अर्न्तगत आनेवाले 78 प्रतिशत रोजगार जल पर निर्भर है अर्थात् विश्व के कुल रोजगार में एक तिहाई रोजगार मलबल 4 में से 3 रोजगार जल पर निर्भर है।

संयुक्त राजय संघ ने इस बार विश्व जल दिवस का विषय भी वाटर एवं गांव यानी जल और नौकरियां रखा है। जिससे विश्व के लोग इस बात को समय रहते समझ लें कि जल मात्र पीने के लिए ही आवश्यक नहीं यह हमारे काम-काज, नौकरियों और रोजगार के लिए भी अत्यंत आवश्यक है। संयुक्त राज्य के हालिया आंकड़ों के अनुसार सन् 2025 तक यानि अब से 9 वर्ष बाद तक ही विश्व को 1. 8 अरब जनसंख्या पीने के जल के संकट का शिकार हो जाएगी। वर्ल्ड इकोनोमी फोरम ने भी अपनी 2015 की रिर्पोट में यह स्पष्ट कर चुकी है कि अगले दशक में प्राणियों के सम्मुख सबसे बड़ा संकट जल का ही होगा। यह बात भी रह रहकर उभरती रही है कि जल तीसरे विश्वयुद्ध का कारण बन सकता है। 'बवरीयिंग अबाउट वाटर की एक रिर्पोट भी बताती है कि 2015 तक भारत में जल का जबरदस्त संकट बन सकता है। इसका कारण भूमि के जल स्तर को शीघ्रता से कम होना बताया गया है, क्योंकि भारत में कृषि की सिंचाई का लगभग 70 प्रतिशत जल और घरेलू जल खपत का करीब 80 प्रतिशत भूमिगत जल से उपलब्ध होता है। भारत में यह संकट गहरा रहा है।

अब थोड़ी 'मानव शरीर' से जुड़ी जल की थोड़ी चर्चा करते हैं। मानव शरीर जिन 5 तत्वों से मिलकर बना है, उसमें जल प्रमुख हैं। हमारे शरीर का दो तिहाई हिस्सा जल से बना है पर क्या आपको पता है कि आज जलजनति रोग ही हमारे शरीर को सबसे ज्यादा नुकसान पहुँचा रहे हैं? ये सही है कि हर कदम पर इंसान इन रोगों की वजह से वेबस हो रहा है। पर इंसान को ये भी सोचना चाहिए कि अगर जल आप जीवन की जगह मौत बांट रहा है तो उसके लिए जवावदेह भी तो हम इंसान ही हैं। वास्तव में जल का शुद्ध होना इसलिए भी जरूरी है क्योंकि वास्तव में जल का शुद्ध होना इसलिए जरूरी है कि क्योंकि इसके माध्यम से ही पूरे पोषक तत्व जैसे कि विटामीन, मिनरल और ग्लूकोज प्रभावित होते हैं। वैसे भी स्वस्थ्य मनुष्य को हर दिन कम से कम 1 ग्लिास शुद्ध जल ग्रहण करना चाहिए। शोध रिर्पोट के अनुसार जहां अशुद्ध पानी के त्वचा संबंधी बीमारियों को न्योता मिलता है। अगर आंकड़ों की माने तो पीने के पानी में लगभग 2100 विसैले तत्व मौजूद होते हैं। ऐसे में बेहतर इसी में है कि पानी का इस्तेमाल करने से पहले इसे पूरी तरह से शुद्ध कर लिया जाए, क्योंकि सुरक्षा में ही सावधानी है। स्वसयि से संबंधित एक रिर्पोट के मुताबिक हर साल 50 लाख से अधिक लोग असुरक्षित पीने का पानी पीने से अ.....काल के गाल बन जाते हैं। दुनिया भर में लगभग एक अरब लोगों को अभी स्वच्छ जल नहीं मिल रहा है और दो अरब से भी अधिक लोगों के पास मलमूत्र ..... की पर्याप्त सुविधा नहीं है। ऐसी स्थिति में शुद्ध पेयजल संकट एक चुनौती भी है।

गंदे जल के चलते तमाम बीमारियों होती है। गंदे जल में मच्छर पैदा होते हैं। डेंगू, फारलेरिया, मलेरिया आदि ऐसी बीमारियाँ हैं, जो गंदे जल की वजह से मच्छरों को बढ़ावा देती है और ये मछर हमें बीमार करते हैं। विषैले तत्व भी जल के माध्यम से हमारे शरीर में पहुँच कर स्वस्थ्य को प्रभावित करते हैं। इन विषैले तत्वों में प्रमुख है- कैडमियम, लेड, मरकरी, मिथल, सिल्वर, कैलिशयम, बेरियम, क्रोमियम, कॉपर, सीलियम, यूरेनियम, बोरान के साथ ही नाइट्रेट, सल्फेट, बोरेट, कार्बोनेट आदि की अधिकता से मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

जल में मैग्नीसियम व सल्फेट की अधिकता से आंतो में जलन पैदा होती है। नाइट्रेट की अधिकता बच्चों में खासकर 'मेयहीमोग्लाबिनेमिया' नाम की खतरनाक बीमारी हो जाती है। यह बच्चों के आंतों में पहुँचकर नाइट्रोजोएमोन में ब..... मेट बन कैंसर पैदा करता हैं वहीं, प्लोनी से फ्लोरोसिज नाम की बीमारी हो जाती है। जल में मौजूद हानिकारक पदार्थ भी होता है जैसे- ताँबा, सीसा, कैडमियम, सेलीनियम, बेरियम, नाइथराइस, फ्लोराइड्स एवं सल्फाइड्स। हर वर्ष प्रदूषित जल से 13.6 लाख बच्चों की मौत भारत में होती है। इसमें दो लाख बच्चों की मौत डायरिया के कारण होती है (विश्व स्वस्थ्य संगठन की रिर्पोट)। इसमें कोई दो राय नहीं कि आनेवाले समय में बढ़ती जनसंख्या की मांग के अनुसार पेयजल की समस्या बढ़ती चली जाएगी। आये हम संकल्प लें कि जल प्रदूषण के बचाव के लिए सभी को आगे आना होगा। पानी में प्रदूषण न हो इसके लिए सामुदायिक स्तर पर उपाय होनी

चाहिए। हैंडपंप के आसपास प्रदूषित जल का ठहराव न होने दें। खुले कुँए के पानी में नियमित रूप से ब्लीचिंग पाउडर डालें। पानी की टंकी के आसपास स्वच्छता रखें।

विधानसभा द्वारा पारित अधिनियम- ''बिहार की विधानसभा ने 1997 में जल में मिथमन के लिए अधिनियम पारित किया था। इस अधिनियम की धारा (3-अ) के अनुसार प्राकृतिक संसाधनों के जल पर राज्य का स्वामित्व है।'' जल पर जैसे-जैसे अधिकार केन्द्रित 'बहस' का मामला आगे बढ़ेगा, उसमें पानी की सार्वभौमिक एवं सर्वपकालिक उपलब्ध ता भी चचा का महत्वपूर्ण बिन्दु बन सकता है।

जल ऐसे गंभीर विषयों पर मैंने काफी शोध किया तब पता चला कि जल विशेषज्ञों ने चेतावनी दी है कि सन् 2050 के आस-पास भारत के आधा दर्जन राज्यों को गंभीर जल संकर का सामना करना पड़ सकता है। विशेष में ने यह चेतावनी भी दी है कि आगामी 50 वर्षों में भारत सहित कई देशों में जल के अभाव से विकास की गतिविधियाँ सम्मलित होकर रह जाएगी। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के अनुसार 2000 तक पूरे विश्व की लगभग दो अरब की जनसंख्या के जल के भारी संकट का सामना करना पड़ सकता है। आज 40 प्रतिशत जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करनेवाला 80 देश जल की गंभीर समस्या की चपेट में है, जो एक भंयकर त्रासदी है। आप प्रत्येक नागरिकों का कर्तव्य है कि वह जल के संरक्षण और संवर्धन की दिशा में बेहतर परिणामों के लिए बच्चों को शुरू से ही इस विषय में शिक्षित और जागरूक करने की जरूरत है।

जल से जुड़ी तमाम समस्याओं के मद्देनजर जरूरत इस बात की है कि प्राकृतिक संसाधनों से संबंधित भारतीय मूल्यों की पुर्नस्थापना की जाए। पानी के प्रति लोगों की सोच बदली जाए। जल सस्ता जरूर है, लेकिन यह असीमित नहीं है। वर्षा जल संचय और किफायती उपयोग प्रवृति ही आनेवाली पीढ़ियों के लिए जल उपलब्धता करा सकता है। जल का इस्तेमाल सिंचाई के साथ-साथ औद्योगिक और घरेलू कार्यो के लिए होता है। सिंचाई और औद्योगिक उपयोग को लेकर वर्तमान जल नीति में परिवर्तन जरूरी है। जल संचय जल के प्रति मित्व्ययी व्यवहार जल बचत और जल की शुद्धता के प्रति लोगों को प्रेरित करने और सम्यक व्यवहार के लिए उन्मुख करने का दायित्व भी होना चाहिए। आप समाज में जल संबंधी ज्ञान और जानकारी की कमी नहीं है, बल्कि चेतना, समझादी और यथोचित व्यवहार की कमी है। लोगों में जल कम होने की जानकारी है, लेकिन जल संय, किफायती उपयोग की प्रवृति नहीं है। जल संबधी सावधानी, सतर्कता, सहयोग और अनुशासन की कमी है। लोग अभी भी नल और पाइप से गाड़ियों और कपड़ों को धोते दिख जाते हैं। खुले नल के प्रति लापरवाह भी हैं। धरती पर जल बहुत है। उपयोग, खासकर पीने योग्य जल जरूर कम है। अगर जल के लिए धरती पर हाहाकार मचा है कारण जल के प्रति मानव व्यवहार है। जल से जुड़ी समस्याओं का निदान मानव व्यवहार में ही है। अगर जल समस्या से नियात पाना है तो जल के प्रति सम्यक मानवीय व्यवहार अपनाना जरूरी है।

भारतीय संविधान के अनुसार राज्य सरकार के पास अपने राज्य में जल संसाधनों से संबंधि

त कानून बनाने का अधिकार होता है। राज्य सूची की प्रविष्टि 17 क अन्तर्गत राज्य को अपने वि..... अधिकार का प्रयोग किसी अन्य राज्य के हितों को प्रभावित किए बगैर तथा विवादों से बचते हुए करना होता है। इसलिए राज्य सरकारें जल के उपर अपने अधिकार का प्रयोग तो कर सकती है, लेकिन वह संसद द्वारा तय की गई सीमाओं के भीतर ही रहेगा। जल पूरी तरह राज्यों का विषय है।

पंचायती राज कानूनी की नजर में जल- पंचायती राज कानून की धारा 92 के अन्तर्गत जल का समुचित प्रबंधन, समान वितरण, कर ग्रहण एवं जल संसाधनों का संरक्षण सुनिश्चित करने के लिए जल समितियां बनाना। ग्राम-पंचायत का अधिकार है। इसके धारा 99 के अन्तर्गत घरेलू उपयोग एवं पशुओं के लिए सिंचाई हेतु प्रयोग होनेवाले नालों, कुआँ, झीलों का निर्माण एवं सफाई के लिए, कुँए, झील, तालाब, पोखर आदि को भरने के लिए पर्याप्त जल उपलब्ध करना 'ग्राम पंचायत' का कर्तव्य है। इसकी धारा (110) के अन्तर्गत पंचायत के पास जल निकासी के गढ़े बनाने की मंजूरी देने का अधिकार होता है। धारा (200) के अन्तर्गत पंचायत जल के संबंधित करों का संग्रह कर सकती है। घरेलू प्रयोग एवं पशुओं के लिए प्रयोग से इतर अन्य उद्देश्यों के लिए पंचायत के स्वामित्व वाले कुँओं तथा तालावों से विशेष जल कर संग्रह कया जा सकता है।

❖

ओम प्रकाश सिन्हा
सादिकपुर, रूकनपुरा
पटना

प्राग्वचन

❑डॉ० श्रीरंजन सूरिदेव
साहित्यवाचस्पति

''श्रीमद्भगवद्गीता'' का ही संक्षिप्त नाम ''गीता'' जन-समाज में प्रचलित है। यह गीता एक ऐसी कृति है, जिसका प्रचार-प्रसार सम्पूर्ण विश्व में है। विश्व में अनेक भाषाएँ व्यवहृत हैं। विश्ववासियों ने अपनी-अपनी भाषाओं में गीता की मूल संस्कृत-भाषा को अनूदित करके उसके हार्द का, मर्म का आस्वाद लिया है। गीता के समश्लोकी अनुवादों और भाष्यों की अपनी विशिष्ट परम्परा रही है। गीता की टीकाएँ भी विभिन्न रूपों में उपलध्य हैं। आज भी गीता के भाष्यों और टीकाओं की रचना-परम्परा अबाध गति से आगे बढ़ रही है। अवश्य ही, गीता के भाष्यों और टीकाओं की संख्या का निर्देश करना कठिन है।

यथोक्त गीता के समश्लोकी हिन्दी-काव्यानुवादकों की परम्परा में एक और नाम जुड़ गया है। वह ना है डॉ0 सीताशरण मिश्र 'शरणागत''। डॉ0 शरणागत ने ''गीता-गीतिका'' नाम से गीता का समश्लोकी काव्यानुवाद प्रस्तुत किया है। अनुवाद की काव्यभाषा, छान्दस शैथिल्य के बावजूद, सरल और सुगम्य हैं।

गीता के जितने भाष्य, टीका और व्याख्या सुलभ हैं, उनमें शंकराचार्य का भाष्य प्राचीनतम है तो डॉ0 शरणागत-कृत, समश्लोकी गीता-काव्यानुवाद आधुनिकतम है। गीता की विषयवस्तु की मौलिकता तक पहुँचने में यह अभिनव काव्यानुवाद-कृति ततोऽधिकउपादेय है। जो संस्कृत नहीं जानते पर गीता के मूल प्रतिपाद्य का आस्वाद लेना चाहते हैं, उनके जैसे जिज्ञासुओं के लिए डॉ0 शरणागत की 'गीता-गीतिका' बहुत सहायक सिद्ध होगी।

गीता दार्शनिक जगत् की प्रसिद्ध प्रस्थानत्रयी में परिगणित है। लोक-जीवन को जो सच्चे अर्थ में जीना चाहते हैं, गीता उनके लिए अवश्यम्पठीय है। गीता, गंगा और गायत्री ये तीनों गकाराद्यक्षर वस्तुएँ भारत देश की अपनी महामहिमामय संस्कृति के वैशिष्ट्य की परिचायिका हैं। गीता-महात्म्य में कहा गया है- गीता सभी उपनिषद् रूप गायों से श्रीकृष्ण रूप दुहनेवाले द्वारा दुहा गया अमृत-रूप दूध जैसी है, जिसे प्रत्येक जन को अपने मन की तुष्टि-पुष्टि के लिए अवश्य पीना चाहिए। गीता गंगाजल के समान है, जिसे पीने वाला संसार में आने-जाने के कष्ट से सदा के लिए मुक्त हो जाता है यानी मोक्ष-लाभ करता है।

गीता सामान्य या सर्वसाधरण जनको दृढ़तापूर्वक कर्त्तव्य-पथ पर गतिशील बने रहने की प्ररेणा देती है। गीता पढ़ने से अशान्त मन को परमशान्ति मिलती है। कर्मफल की कामना से रहित होकर अनासक्ति-पूर्वक अपने कर्तव्य को निरूद्विग्नभाव से पूरा करने का महान् संदेश गीता से प्राप्त होता है।

डॉ0 शरणागत की यथाप्रस्तुत 'गीता-गीतिका' की भूमिका पुस्तक के प्रस्तुतिकरण के औचित्य पर समीचीन प्रकाश-निक्षेप करती है, साथ ही इस कृति की उपयोगिता को भी हृदयंगम कराती है। आशा ही नहीं, विश्वास भी है, डॉ0 शरणागत की यह अपूर्व कृति गीता के काव्यानुवाद के क्षेत्र में नवीन निक्षेप के रूप में लोक समादृत होगी और काव्यानुवादक को रससिद्ध सुकृति कवि के गौरव के सम्पन्न करेगी। यथास्तु।

❖

डॉ0 श्रीरंजन सूरिदेव
साहित्यवाचस्पति